प्रवेश

"आत्म ज्ञान" मानव जीवन की सब से बड़ी समस्या है और यह तभी संभव है जब वह संसार से ऊपर उठ जाय क्योंकि मानव जीवन के चारों ओर सभी वस्तुयें एक समस्या है और सीमायें।

आदम मनुष्य ने जब एक शब्द गढ़ा उसने सोचा मैंने एक समस्या हल कर दी पर वास्तव में उसने एक समस्या का सृजन किया।

संदेह बुद्धि के लिय एक विश्राम है।

संसार में बुद्धि का आवर्भाव किसी अचिंत्य आकस्मिक घटना से हुआ होगा—प्रत्येक समस्या नाटक को यहा से प्रारम्भ करना चाहिए।

हम उस मनुष्य को क्या कहेंगे जो कहेगा "सूर्य उदय होता है क्योंकि मैं चाहता हूँ वह उदय हो", या वह मनुष्य जो यह कहता कि मैं विजित हूँ क्योंकि यह मेरी

एक

इच्छा है पर हमारी इच्छा इसके अतिरिक्त और है ही क्या ? इच्छा जिसके चरम विकास का नाम है कला ।

विचार स्वातन्त्र के अर्थ है विचारो का अभाव जो वर्तमान युग में कोई ट्रेजडी नहीं है।

नाटककार का पूर्ण विकास जब होता है जब वह स्वयं अपने असत्य पर विश्वास करने लगता है।

मनुष्य अपनी बुद्धि स्थूलता से वस्तुओ का वास्तविक रूप छिपाये हुये हैं । मानव जीवन की यही एक समस्या है।

हमारा आधुनिक युग एक पागल वृद्धा के समान है उसे बकने दो और यदि तुम सतर्क नहीं हो तो बर्तन कुर्सिया और टेबुल भी तोड़ने दो।

प्रतिहिंसा और प्रेम में स्त्री पुरुष से अधिक "आदिम" है यही सारी समस्या का मूल है।

" हिन्दू विवाह वेश्यागमन का पतित रूप है " ऐसा मैंने एक स्त्री को कहते सुना।

उदर और स्त्री दो कारण हैं कि एक हिन्दू अपने आपको परमात्मा नहीं समझता।

मैं उससे घृणा करता हूँ।

क्योंकि मैं उसके अयोग्य हूँ।

कभी किसी प्रेमी ने ऐसा कहा है?

स्टेज जीवन के लिये एक चुनौती है इसी प्रकार कि प्रत्येक कला जीवन के विरुद्ध एक विफल विद्रोह।

किसी व्यक्ति के लिये समस्यायें बनाना और सुलझाना एक क्षम्य ऐयाशी है उन्हे कला कि फुटलाइट्स में स्टेज पर लाना उस व्यक्ति को उस की ही दृष्टि में हीन बनाना है।

एक समस्या को सुलझाना कई समस्याओं का सृजन करना है।

समस्या नाटक का केवल एक उद्देश्य है, किसी समस्या को एक हास्यास्पद तुच्छता और असंभवता बना देना।

नाटक में समस्या का लाना उसमें एक प्रखर और उत्तेजित अध्यात्मिक सघर्ष का समावेश करना

हैं। संसार के जिन कलाकारो को इसमें सफलता मिली हैं वह उंगलियों पर गिने जा सकते हैं।

हिन्दी में समस्या नाटक-कारो का केवल एक सहज आदर्श है। उनके कथनोपकथन में 'समस्या' शब्द आ जाना।

भावुकता कलाकार के लिये विष है और हिन्दी नाटककारो का भोजन। पुरानी कहावत है जो एक के लिये जो विष है दूसरे के लिये भोजन।

आधुनिक हिंदू जीवन में ट्रेजडी केवल तीन बातों तक सीमित है, वैधव्य, प्रेम जिसका अन्त विवाह नहीं होता, और पश्चिमीय सभ्यता और शिक्षा के ससर्ग से किसी पात्र में एक मुखर 'बौड़मपन' का प्रवेश।

एक नाटक का लिखना जो स्टेज के लिये नही लिखा गया किसी भी प्रकार न्याय संगत नहीं है।

हिन्दी स्टेज के माता पिता ने अभी अपना परिणय भी आरम्भ नहीं किया है।

हिन्दी में नाटककारो को केवल एक कला की आवश्यकता है अपने नाटकों को प्रकाशित करने की।

प्रायः समस्त नाटककार जो पेटी कोट की शरण लेते हैं दो पुरुषों को एक स्त्री के लिये आमने-सामने खड़ा कर संघर्ष उत्पन्न करते हैं मैंने भी यही किया है केवल, बुलडाग कुत्ते के मुख से हड्डी निकाल कर अलग फेंक दी है।

कूड़े गाड़ी से कुचल कर एक छछूंदर का मर जाना दुखान्त घटना है पर ट्रेजडी नहीं: स्टेज पर ट्रेजडी के सरल अर्थ हैं किन्हीं विशेष पात्रों की किसी विशेष अभिव्यक्ति में अन्तिम घटना।

जनता यथार्थवाद से चिढ़ती नहीं है वरन् भय खाती है।

साधारण जनता यथार्थवाद को देख कर पागल हो जाती है इसी प्रकार जैसे एक बन्दर अपना मुख दर्पण में देख कर।

यथार्थवाद और आदर्शवाद का अन्तर पाठक के मष्तिष्क में होता है लेखक के नहीं।

विवेक और तर्क तीसरी श्रेणी के कलाकारों के चोर दरवाजे (Trap doors) है।

पांच

जिस भांति जीवन असार और निष्फल है उसी प्रकार कला भी। जीवन एक लजीली मुस्कान है कला एक शुष्क और कठोर हास्य।

कला अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर अश्लील हो जाती है।

कला में अश्लीलता के अर्थ हैं नग्न पवित्रता।

(लिखने के बाद मुझे प्रतीत हुआ कि मेरे "शैतान" के एक सीन में शा की छाया तनिक मुखर हो गई है, मैं इसे निर्विवाद स्वीकार करता हूं।)

प्रयाग प्रवास, भुवनेश्वर प्रसाद
३० मार्च १९३५.

पुनश्च,

मैं अपनी इस प्रथम छपी हुई कृति के साथ अमर कथाकार श्री प्रेमचन्द का नाम जोड़ कर अपने आप को उनका आभारी बनाता हूँ।

श्री भुवनेश्वर प्रसाद

"श्यामा : एक वैवाहिक विडंबना"

(जॉर्ज टाउन में मिस्टर पुरी के भव्य बंगले का एक सुसज्जित कमरा। कमरे के दाहिनी ओर एक द्वार है, जिस पर लाल साटिन का पर्दा पड़ा है, औरो में चिके। सलीव पर चढ़ा हुआ ईसा का भव्य चित्र बाईं ओर, उसके नीचे ही उमर ख़य्याम की रुबाइयो के दो चित्र। दाहिनी ओर द्वार के इधर उधर एक अर्द्ध अश्लील बेड-रूम चित्र और कई इटालियन लैण्डस्केप्स शोभित हैं। समय नवम्बर का एक मेघाच्छादित प्रातः, तारीख और साल की कोई आवश्यकता नहीं बीसवीं सदी का कोई दिन अधकार में नहीं रह सकता। मिस्टर अमरनाथ पुरी, आयु लगभग तीस वर्ष, गोरे-चिट्टे आंखों पर चश्मा, हाथो मे चमड़े के गल्वस, आकृति में वैमनस्य, वाणी में रुचि वैचित्र्य काला सर्ज का सूट पहने एक सोफे पर बैठे हुए निर्विकार रूप से हीटिंग स्टोव की ओर देख रहे हैं।)

मिस्टर पुरी (सहसा) ब्येरा ! ब्येरा ! हीरा !

(हरी सर्ज की अचकन में शीत से कांपते हुए एक अधेड़ मनुष्य का प्रवेश। सिर पर साफा पैर नग्न, पैजामें में उन्हे बराबर छिपाने की चेष्टा करता है)

हीरा — हुजूर।

मिस्टर पुरी — बाहर भी इतनी सर्दी है ?

हीरा — (मतलब न समझ कर) जी नहीं, हां, पानी बरसने ही वाला है।

मिस्टर पुरी — मेम साहब कहां है ?

हीरा — (और भी अधिक नम्र हो कर) चाय पी रही है, हजूर उन्हे मालूम है आप यहां है।

मिस्टर पुरी — (रुक कर) और वह बाबू, जो कल आये है ?

हीरा — उन्हे वहू रानी ने अभी जगाया है (हँसने की चेष्टा करता है; पर मिस्टर पुरी की ओर देख कर सहसा गंभीर हो जाता है)

मि० पुरी — हूँ।

हीरा — क्या उन्हे यहां भेज दूं सरकार ?

मि० पुरी — (एक अनिश्चित इंगित करके ध्यान-मग्न हो जाते हैं)

(हीरा दो क्षण रुक कर चला जाता है, मिस्टर पुरी उठ कर टहलने लगते हैं। मिस्टर अप्पी का

प्रवेश। मिस्टर अप्पी चींटी से मेहनती, कौवे से चतुर, मृत्यु से भी अधि व्यस्त और गंभीर दीखने का प्रयत्न करते हैं)

मि० अप्पी आज राजा सरीलिया की अपील है।

मि० पुरी हूँ।

मि० अप्पी वह मर्डर अपील भी तो आज दाखिल होगी ।

मि० पुरी (हाथो से अनिश्चितता का इंगित करते है)

मि० अप्पी आज सांझ को........

मि० पुरी (सहसा उद्विग्न हो कर) आज सांझ को, कल सांझ को, परसों, कभी मैं कुछ न कर सकूंगा।

मि० अप्पी (कुछ रुक कर और स्तंभित हो कर) मेसर्स शापुर जी के रुपये भेज दीजिये।

मि० पुरी मेम साहब को दे दीजिये।

(मि० अप्पी कुछ कहना चाहते हैं; पर सहसा रुक जाते है और सहसा जैसे कोई उन्हे बाहर बुला रहा हो, चले जाते है। मिस्टर पुरी उसी अनिश्चित-अस्थिर भाव से टहलते है)

मि० पुरी हीरा!

हीरा (बाहर से) हजूर!

मि० पुरी कुछ नहीं।

(लाल साटिन के पर्दे वाले द्वार से मिसेज़ पुरी का प्रवेश। गोल, हंसमुख, लापरवाह चेहरा; पर आंखों में विषाद की बुद्धिमत्ता। आयु प्रायः २३ वर्ष, अधरों पर विलास की सजीवता, खद्दर की साड़ी पारसी ढंग से पहने, ऊपर से एक काला ओवर कोट)

मिसेज पुरी — (हंस कर) मनोज को तो देखिए ! अभी मैंने उठाया, अब मुह फुलाये बैठा है कहता है, तुमने मेरा बड़ा सुन्दर स्वप्न भंग कर दिया।

मिस्टर पुरी — (हंसने का प्रयत्न करते हैं ; पर विफलता उनके अधरो पर अंकित हो जाती है) विचित्र पुरुष हैं।

मिसेज़ पुरी — (कुछ कहना चाहती हैं; पर उसके पहले ही सरोवर-सी स्वच्छ हंसी हस देती है।)

मिस्टर पुरी — तुमने चाय पी ली शम्मी ?

मिसेज़ पुरी — हां। तुम स्वस्थ तो हो (गंभीर आकृति से) कैसा जाडा पड़ रहा है, तुम ओवर कोट भी नहीं पहनते। हीरा, (उत्तर की प्रतीक्षा न कर के) साहब का लम्बा कोट ले आओ ।

मिस्टर पुरी — मनोज को चाय पिलाओ ।

मिसेज़ पुरी — वह नही पियेगा, उसे अपने स्वप्न का बड़ा शोक है। (इस बार तनिक भी नहीं हंसती है)

मिस्टर पुरी (सूखी हंसी हंस कर) मुझे इसका बालकों के समान कोरी आंखों से एक क्षण में प्रफुल्लित और शोकान्वित होना, बहुत प्रिय लगता है।

मिसेज़ पुरी और उसका क्रोध! अभी मुझ से बिगड़ रहा था, मैंने मुस्करा कर उसकी ओर देखा और बस, बालिकाओं-सा लजा गया?

मिस्टर पुरी (दो क्षण गंभीर नीरवता रहती है। सहसा) आज क्या वह जायगा।

मिसेज़ पुरी हां, मैंने उस से कह दिया।

मिस्टर पुरी क्यों ?

मिसेज़ पुरी क्यों? (उनकी आंखों से एक टक देख कर) क्योंकि तुम उसे से ईर्ष्या रखते हो।

मिस्टर पुरी (चकित होकर) मैं उस से ईर्ष्या रखता हूं? (उत्तेजना के साथ) उससे, उस अर्ध बालिका से, जो हर समय अपने पुरुष होने के लिये क्षमा-याचना करता है। जो केवल एक रुपहली रात्रि के स्वप्न की भांति है, जो जीवन या प्रेम को इतना ही कम जानता है, जितना तुम मुझे—हूँ, मैं ईर्ष्यालु नहीं हूं, शम्मी।

मिसेज़ पुरी (दृढ़ भाव से) क्यो?

मिस्टर पुरी (उसी तेज के साथ) क्योंकि मुझे तुम पर, तुम्हारे प्रेम पर विश्वास है।

मिसेज़ पुरी आप को अपने गुणो पर गर्व है, आपको अपना इतना भरोसा है!

मि० पुरी (कृत्रिम भाव से) नहीं, मुझे तुम्हारी पवित्रता, तुम्हारी महत्ता का गर्व है, उसी का भरोसा है।

मिसेज़ पुरी (निर्विकार भाव से) तब आप मुझे प्रेम नहीं करते।

मि० पुरी (धीमे स्वर में) यह मत कहो शम्मी, परमात्मा के लिये एक क्षण भर को भी ऐसी बात न सोचो।

मिसेज़ पुरी तुम मुझसे प्रेम भी करते हो और उस पुरुष से ईर्ष्यालु भी नहीं हो, जिसको प्रेम करना किसी भी स्त्री के लिए इतना सरल और नैसर्गिक है, जैसे वसन्त का आगमन या प्रातः समीर में कलिका का खिलना! क्या तुम्हारे हृदय की भावनाएं और वासनाएं शरीर से विलग हैं?

मिस्टर पुरी (कुछ देर चुप रह कर) क्या मनोज तुम्हें प्यार करता है?

मिसेज़ पुरी मैं किसी के हृदय की बात क्या जानूं?

मिस्टर पुरी (अपने अंतर के संघर्ष से विजय पाकर) और तु....

मिसेज़ पुरी यह तुम मुझ से अधिक जानते हो। समाज के

सम्मुख मैं तुम्हें प्यार करने के लिए उत्तरदायिनी हूँ और विवाह करके यदि मैंने जीविका के लिये अपने आपको नहीं बेचा है—यदि इस कठिन सत्य का सामना तुम नहीं करना चाहते—तो मुझे प्रेम तो चाहिए।

मिस्टर पुरी (जैसे स्वप्न देखते हो) मैं अपना प्रेम शब्दों में नहीं व्यक्त कर सकता...

मिसेज़ पुरी यह सब कविता है, कोरी भावुकता है। इससे मुझे मनोज की उक्ति पसन्द है। जब उसका नायक कहता है—

'मैं उतरे मद का-सा खुमार,
तुम नयनों की मदिरा-सी०'

मिस्टर पुरी शम्मी, मेरा जीवन तुम्हारे हाथ है। मेरे पास शब्द नहीं है, मेरे पास उनकी आत्मा है। मेरे पास कविता नहीं; पर मेरे प्रेम में उसकी सजीवता है। तुम आज मेरे प्रेम की उपेक्षा कर सकती हो; पर एक दिन अवश्य तुम्हे उसकी आवश्यकता होगी।

मिसेज़ पुरी हां, ठीक है, तुम्हें मेरी पवित्रता पर विश्वास नहीं है। तुम्हें अपनी महत्ता पर गर्व है। तुम्हे मनोज से ईर्ष्या नहीं है, मुझ से भय है।

मिस्टर पुरी तुम क्या कह रही हो शम्मी, मैं एक शब्द भी नहीं समझता।

मिसेज़ पुरी (अब वह मिस्टर पुरी के पास से आ कर एक दीवान-पर बैठी है। तुरन्त)

तुम क्या समझ रहे हो, मैं वैसा तो एक शब्द भी नहीं कहती।

(हीरा का प्रवेश)

हीरा मोटर तैयार है सरकार!

मिस्टर पुरी मनोज बाब से पूछो, वह स्टेशन चलेंगे या (श्यामा की ओर देख कर) यदि तुम लोग न चाहो, तो न चलो।

मिसेज़ पुरी (शंकित-सी) मैं तो चलूंगी।

मिस्टर पुरी (हीरा की ओर देख कर अपनी टाई संभालते हुए) जाओ, मनोज बाबू को खबर कर दो।

दूसरा दृश्य

दिन वही, समय मध्यान्ह।

(मिस्टर पुरी के बंगले का दूसरा कमरा। दीवारें सादी, स्वच्छ कारनिस के ऊपर एक सुकुमार और मधुर युवक का चित्र रक्खा है और वैसा ही एक १९ वर्ष का युवक गले में रेशमी रूमाल लपेटे रेशमी पैंजामा और कुर्ता पहने, रेशमी काले-लहराते-से बालो को हाथों से समेटे, किसी की प्रतीक्षा में बैठा है।

उस युवक की दृष्टि में उन्माद, अस्थिरता और स्निग्धता का इतना विचित्र समावेश है कि कोई भी उसके प्रति आर्कषित हुए विना नहीं रह सकता। उसमें बालिका-सी लज्जा और कविता-सी मधुरता है।

दाहिनी ओर के द्वार से--जो ठीक उससे पीछे है--मिस्टर पुरी का प्रवेश।)

युवक (कम्पित कठ से) रानी !

मिस्टर पुरी (अपना मानसिक उद्वेग भरसक दबा कर) नहीं, मै हूँ मनोज,मै सोचा कि मै भी तुम्हारे अप्रकाशित स्वप्न लोको में से एक लोक छीन लाऊँ। क्या तुम वास्तव में हर समय स्वप्न ही देखा करते हो ?

मनोज (उसकी ओर देख कर) क्योंकि स्वप्न ही इस संसार की एक मात्र वास्तविकता है। यथार्थ जीवन में तो किसी रस, किसी भी भावना की पुनरुक्ति असंभव है। मिस्टर पुरी, अपनी आत्मा को जान कर, मनुष्य स्वप्नों में ही रहना चाहता है (सहसा लज्जित हो कर) पर... आप बैठ जाइये। (उठ कर खड़ा हो जाता है और पीछे एक मेज़ से टकरा जाता है। मिस्टर पुरी मुस्करा कर उसे सभालते है और उसके कन्धे पर हाथ रख कर प्रेम-पूर्वक उसे अपने पास बैठा लेते है)

मिस्टर पुरी आज सांझ को मैं 'लेबर इन्टेलिजेन्स ब्यूरो' में व्याख्यान दूंगा, तुम चलोगे?

मनोज (नतमस्तक) मैं व्याख्यानो में विश्वास नहीं करता।

मिस्टर पुरी (हस कर) मैं तुम्हारे विश्वासो में विश्वास नहीं करता।

मनोज (सहसा उनकी ओर देख कर) यही आपकी एक-मात्र सार्थकता है।

मिस्टर पुरी (कृत्रिम प्रफुल्लता से) तो तुम व्याख्यानों में विश्वास नहीं करते?

मनोज मैं व्याख्यानदाताओ में विश्वास नहीं करता। उनके लिये परिश्रम, तर्क, बुद्धि, ज्ञान, सामाजिक या व्यक्तिक किसी भी गुण की आवश्यकता नहीं है.....

मिस्टर पुरी (अप्रतिभ होकर) हूं।

(कुछ देर नीरवता रहती है)

मनोज (सहसा) मैं आप से एक बात कहना चाहता हूँ।

मिस्टर पुरी (त्रस्त नेत्रो से उसकी ओर देखते है)

मनोज (मानसिक विप्लव को भरसक दबा कर) मैं आप की धर्मपत्नी से प्रेम करता हूँ।

मिस्टर पुरी (जैसे उन्हे अपने ऊपर विश्वास न हो) ठीक है, उसको सभी प्रेम करते हैं, वह ऐसी सुन्दरी है, उसकी

आत्मा ऐसी अपूर्व है, वह ऐसी सुन्दरी है, ठीक है।

मनोज — मैं हंसी नहीं कर रहा हूँ।

मिस्टर पुरी — तब तुम मुझ पर अन्याय कर रहे हो ! यदि ऐसे कठिन और विकराल सत्य को तुम हंसी में नहीं कह रहे हो। यदि तुम इसे अपनी कविता की तरलता और सरलता नहीं दे सकते, तो तुम मुझ पर अन्याय कर रहे हो। मनोज, यह तुम्हारा अन्याय है !

मनोज — यह आपका भ्रम है मिस्टर पुरी, मैं आपके ही अन्तर से यह बात आप से कहना चाहता हूँ। मैं आप के अन्तस्तल में प्रविष्ट हो कर आप से कहना चाहता हूँ कि 'श्यामा' आपकी नहीं है, वह मेरी है।

मिस्टर पुरी — तुम्हारी ! तुमने अभी उसे मेरी धर्म-पत्नी कहा है, अधर्मी, निर्लज्ज !

मनोज — (व्यवस्थित) तुम मुझे केवल कटु वचन कह सकते थे और अब तुम अप बचन भी कह रहे हो।...पर श्यामा तुम्हारी नही है !

मिस्टर पुरी — (उत्तेजित स्वर में) क्यों ?

मनोज — क्योंकि समाज की एक हृदय हीन लौह-विधि ने ही उसे तुम्हारी बनाया है, तुमने उसे पाने के लिये क्या त्याग किये है तुम्हारा उस पर क्या स्वत्व है ?

मिस्टर पुरी　(एक शहीद के स्वर में) मैं उसे प्यार करता हूँ।

मनोज　(हँस कर) तुम उसे प्यार करते हो और तुम इस विडम्बना को अपने जीवन का अंग बनाये हुए हो।

मिस्टर पुरी　(विकंपित और उत्तेजित स्वर में) मैं उससे प्रेम करता हूँ।

मनोज　तुम, जिससे उसकी एक भावना भी नहीं मिलती। तुम, जो उसे एक निर्जीव लता के समान अपने अंग में लपेटे रहना चाहते हो। तुम, जो केवल अपनी शारीरिक वासनाओं को तृप्त करना चाहते हो। तुम उसे प्यार करते हो ? तुम, जो अपने सर्वोत्तम रूप में भी उसके साधारण-से-साधारण त्याग से निकृष्ट हो।

मिस्टर पुरी　(अधिक उत्तेजित हो कर) मैं उसे प्रेम करता हूँ।

मनोज　ठीक है, तुम उसे प्रेम करते हो, जिसको आशाओं और अभिलाषाओं की बलि कर के तुमने अपने इस जीवन को रस दिया है। तुम में और उसमें क्या समानता है, तुम किस प्रकार उसके योग्य हो ?

मिस्टर पुरी　(क्रोध से कांपते हुए) निकल जा मेरे घर से, निर्लज्ज ! (उसे मारने दौड़ते हैं)

मनोज　(चीख कर) देखो, मेरे पास मत आना ! मिस्टर

पुरी, मैं आत्मघात कर लूंगा, अगर तुमने मुझे छुआ। मैं अपने जीवन का अन्त कर दूंगा!

मिस्टर पुरी (तनिक शान्त हो कर) कायर!

मनोज (वैसा ही अव्यव्यवस्थिति) तुम मेरी हत्या कर सकते हो। तुम, तुम, कायर हो।

मिस्टर पुरी (शान्त होकर) अच्छा आओ, मैं तुम से शान्त भाव से वातें करना चाहता हूँ। मैं...मुझे क्षमा कर दो।

मनोज (वैसे ही) नहीं, मैं रानी से कहूँगा, तुम मेरी हत्या कर सकते हो।

मिस्टर पुरी नहीं, इससे क्या लाभ। यहां आओ, मैं देखता हूँ मेरा-तुम्हारा केवल सैद्धान्तिक मत-भेद है। आओ, हम स्थिर चित्त हो कर वाते करें।

मनोज (वैसे ही) नहीं, मैं रानी से कहूँगा, तुम मेरी हत्या कर सकते हो।

(वाहर मिसेज पुरी का कण्ठ-स्वर सुन पड़ता ह। दोनो एकाग्र हो कर उसी ओर ध्यान देते हैं।)

मि० पुरी (व्यग्र हो कर) नहीं मनोज, इस से कोई लाभ नहीं। क्या तुम उसकी सहानुभूति भी मुझ से छीनना चाहते हो? क्या तुम चाहते हो कि वह मुझे एक पतित

ईर्ष्यालु मनुष्य समझे ? मैं तुमसे विनय करता हूँ इससे कोई लाभ नहीं है मनोज ।

मनोज (सहसा स्वस्थ हो कर) तब वह तुम्हारी कभी नहीं हो सकती। आह ! तुम उससे अपना यथार्थ स्वरूप छिपाते हो । मैंने तुम्हारा वास्तविक रूप देखा है, और मैं तुम से सहानुभूति करता हूं वह उसे नहीं जानती और तुम से घृणा करती है।

मि० पुरी (हताश होकर) आह !

(सहसा मिसेज़ पुरी का एक श्वेत साड़ी में प्रवेश। उसके केश रूखे और बिखरे हुए हैं और आकृति चांदनी के समान सरल है उसके आते ही मिस्टर पुरी व्यस्त दीखने का प्रयत्न करते हैं और एक क्षण चित्र की ओर देख कर गुनगुनाते हैं दूसरे क्षण रेलवे टाइमटेबिल उठा कर पढ़ने लगते हैं)

मिसेज़ पुरी (मनोज की ओर देख कर) मैं तुम्हारी कब से प्रतीक्षा कर रही हूँ मनोज !

मनोज रानी, मैं......

(मिस्टर पुरी एक क्षण में आग्नेय और दूसरे में विनय-पूर्ण नेत्रों से देखते हैं)

मिसेज़ पुरी — अच्छा, अच्छा, आओ बाग़ में चलो; पर मैं तुम्हें तितलियां न पकड़ने दूंगी!

(वह उसे बांह पकड़ कर बाहर ले जाती है। मिस्टर पुरी उनकी ओर कातर दृष्टि से देखते हैं।)

मिसेज़ पुरी — (द्वार के पास सहसा मुड़ कर) आप आज सांझ कहां भोजन करेंगे, कपूर के रेष्ट्रों में? मैं मनोज को मिसेज़ कौल के यहां ले जाऊंगी।

मिस्टर पुरी — मैं आज भोजन न करूंगा।

मिसेज़ पुरी — (तनिक चिन्तित हो कर) क्यों, तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है? (सहसा लौट पड़ती है और उनके पास जाकर) देखती हूं, तुम्हें अपनी तनिक भी चिन्ता नहीं है।

(मिस्टर पुरी दूसरी ओर शून्य भाव से ताकते हैं)

मिसेज़ पुरी — अच्छा मनोज, तुम थोड़ी देर पार्क में हो आओ। सिगरेट, केवल एक सिगरेट पीना।

(मनोज गुनगुनाता हुआ चला जाता है। मिसेज़ पुरी, मिस्टर पुरी के पास बैठ कर, उनसे बातें करने की चेष्टा करती है)

(अक्टूबर' ३३)

"एक साम्यहीन साम्यवादी"

(कानपुर के पार्श्वभाग में लज्जा से मुंह छिपाये कुलियों के निवास स्थान। नगर का विद्युत प्रकाश यहां तक न पहुंच सका पर सभ्यता का प्रकाश पहुंच गया है। सांझ की धुंधलाहट में तैल और मिलों की कालौंच की सहायता से बाल संवारे लम्बे-लम्बे कालरों की कमीजें पहने स्वयं अपने फरिश्तों के समान मिल के मज़दूर हंसी ठिठोली कर रहे हैं।

उसी ज्वलन्त नगर के प्रेत के समान एक भाग में एक छोटी-सी दो द्वारों की एक कोठरी, जिसमें सामान के नाम का एक टूटा काठ का बक्स, एक टूटी और एक अर्द्ध टूटी चारपाई, कुछ धुंएं के रंग की हांडियां, मनुष्य के नाम एक स्वयं अपने से ईर्ष्यालु हाड़-चाम का मज़दूर, प्रकाश के नाम की एक बीस-बाइस वर्ष की युवती, मलिन वस्त्रों में इस प्रकार दीखती है; जैसे आंसुओं की नीहारिका में नेत्र)

मज़दूर — तुझे मेरी क्या पड़ी पार्वती, तेरे पैरों पर न जाने कितने

सिर रगड़ते हैं। कोई भी तुझे पटरानी बनाने को तैयार है।

पार्वती : (अधउठाई हांड़ी को छोड़ कर) तुम्हें हर घड़ी यही सवार रहती है!

मज़दूर मेरी तो जान मुसीबत में है!

पार्वती क्या मुसीबत है?

मज़दूर : (उत्तेजित होकर) यही सब छोटे-बड़े, आलाअदना तेरे पीछे पड़े रहते हैं।

पार्वती (रोष में) तो मैं यह कब चाहती हूँ?

मज़दूर : तो क्या अब लड़ेगी, मैं कब कहता हूँ, तू चाहती है? हरामख़ोर!

(उठ कर जाना चाहता है; पर सहसा एक दूसरा मांस और वैमनस्य से बना मज़दूर आता है, उसकी दृष्टि में संभावना की मात्रा अधिक और विश्वास की बड़ी कमी प्रतीत होती है। वह आते ही पार्वती की ओर अर्थ-पूर्ण दृष्टि से देखना चाहता है; पर विचित्र भाव उसकी आकृति पर अंकित हो जाते हैं, जो उसके पति को देख कर और भी विकृत हो उठते हैं)

नया मज़दूर सुन्दर, तेरे तो मिजाज आसमानी घोड़े पर सवार रहते है, जमादार का मुंह लगा हो रहा है न!

सुन्दर — मैं ताड़ी पीने न जाऊंगा, तुम से कहे देता हूँ।

नया मजदूर — अब ताड़ी की ऐसी-तैसी, बात भी करोगे कि ऐसे ही रस्सी तुड़ाओगे!

सुन्दर — (भेद-पूर्ण दृष्टि से पार्वती की ओर देखता है। दो क्षण गम्भीर नीरवता रहती है)

नया मजदूर — सुना, साहब छुट्टी लेकर जा रहा है।

सुन्दर — हूँ।

नया मजदूर — अगर पुराना साहब आ जाय, तो अपने मजे हो जायं।

सुन्दर — हां, तब तो तुझे फोरमैन बना ही देगा, क्यों रे गोविन्द!

गोविन्द — (झेंप कर) न बना देगा तो क्या, इस तरह रोज जरीमाना तो न देना होगा। अब की इस महीने में पांच रुपये कट गये, चार मिले, दो भैरों को दे दिये, अब दो रुपये से कैसे काम चलेगा, बतलाओ?

सुन्दर — मुझ से क्या पूछते हो, मैं आज ही तीन रुपये उस हलवाई से उधार लाया हूँ—आज खाने को साग भी नहीं था।

गोविन्द — आखिर इसका होगा क्या?

सुन्दर — अबे सब किस्मत के खेल हैं! हमारी तकदीर खोटी है, तो किसी को क्या दोष देना। अभी देखो, गंगा के

लड़के ही को देखो, गंगा ने किस मुसीबत से उसे पढ़ाया, अभी कल तक यहां उसका बाप मेरे साथ ताड़ी पिया करता था ; पर आज वह बड़ा आदमी है।

गोविन्द — यह तो सब कुछ है, पर क्या हम आदमी नहीं है ? हमारे भी तो हाथ-पांव हैं। हमारे भी तो बीबी-बच्चे हैं, हम भी तो आराम से रहना चाहते हैं, हम भी तो बीमार-ऊमार होते हैं। ईश्वर ने सब को खाने को तो दिया है, यह क्या है कि रईस हजारों रुपया नाच-मुजरे, मेले-तमाशे में उड़ा दें, दस रुपये के पान खा कर थूक दें, और हम पेट भर खाने को भी न पावें। हमें भी तो अपने बच्चे इतने प्यारे हैं, जितने उन्हें। उनके लड़के अलल्ले-तलल्ले करें, घी-दूध में नहायें और हमारे बच्चे पेट भर खाना भी न पा सकें, लज्जा छिपाने के लिये कपड़े भी न मिलें !

सुन्दर — बस-बस बड़ा कांग्रेसी बन गया है ?

गोविन्द — कांग्रेसी का क्या, तुम क्या यह नहीं जानते हो ? जब तुम्हारा लड़का मरा, कौन से वैद-हकीम आये थे, कौन-सी तुमने उसकी दवा-दारू करवाई थी, बेचारा सिसक-सिसक कर मर गया और उस दिन बड़े बाबू की लड़की को ही देखो मामूली जूड़ी थी, डॉक्टरों ने

घर भर दिया । क्या तुम लडका कहीं से उठा लाये थे, कि तुम्हारी आत्मा नहीं कलपती ?

(सुन्दर एक दीर्घ नि:श्वास लेता है और पार्वती की ओर था कल्पना कर के देखता है कि वह रो रही है ।)

पार्वती तुम लोगो को कुछ धन्धा नहीं है ? बेकार की बाते किया करते हो !

गोविन्द इसे ठलुआव समझती है, ज़रा अपने दिल पर हाथ रख !

पार्वती तो क्या करूँ, सिर टकरा दू ? मरते हुए की टांग कौन पकड़ लेता है।

गोविन्द (उत्साहित होकर) यह बात नहीं, सुन्दर की बहू, मजूरी करते-करते तो हम मरे जाते है.........!

सुन्दर (हंस कर) भालू तो हो रहे हो तीन मन के—

गोविन्द (कुछ झेंप कर) तीन मन का क्या, सोलह बरस में अपने से दुगने को कुछ नहीं समझता था। चार मन की गाठ अकेले यूं उठा ली थी, साहब कहने लगा—'वेल टुम मर जाटा, टो हम क्या करटा' ससुरे ने दो रुपया फैन किया।

सुन्दर हां, तो फिर।

गोविन्द तुम्हें ठिठोली सूझ रही है, यहां रोआं-रोआं जल रहा है। न-जाने तुम कैसे बिसासघाती आदमी हो !

सुन्दर (गम्भीर होकर) तो मैं क्या करूं ? साहब कुछ सौ-सौ रुपये तो देही न देगा। और वह क्यों दे, जब हमारे ही भाई आठ और सात में जाने को तैयार हैं। मुझे भी नौ ही मिलते हैं, गनीमत जानो लाला गोविन्द......।

गोविन्द सौ तुम मागते होगे, मैं तो खाने भर को मांगता हूँ।

पार्वती क्यों मांगते हो, तुम्हारा कुछ इजारा है, भागो यहां से, धूरी सांझ किल-किल मचा रक्खी है !

गोविन्द तू और बटलोई की तरह उबल रही है !

पार्वती उबलूं न तो क्या, तुमसे बातें करने के सिवा कुछ और होता है ? क्यों नहीं खेती करते, क्यों नहीं हल जोतते ? लाट साहबी कैसे करो, ताड़ी-दारू कैसे पियो, मूलगंज कैसे जाओ। चल दिये बड़ी-बड़ी बातें करने !

गोविन्द देख सुन्दर की बहू ! तू इन बातों को क्या समझे, खेती में क्या धरा है, छाती फाड़ कर धरती से अन्न पैदा करो ; पर खाने तक को तो मिलता नहीं। पर-साल चाचा के चार बीघे गेहूं हुए ; पर अब की बीज

तक उधार लिया ! कितना लगान पड़ता है और फिर उन पर नजराना, मिटौनी और महाजन ......

सुन्दर । सच कहना गोविन्द, कितनी पी है ?

गोविन्द (रोष में) लो मैं जाता हूँ !

सुन्दर (कृत्रिम रोष के साथ) जा, तू बड़ा लायक है !

पार्वती सुने जाइये ! हम सब आपका कहा मानेंगे, ओ लपटन साहब !

(पांच मिनट की नीरवता के पश्चात् बाहर से कोई भर्राई हुई आवाज़ में पुकारता है—)

'सुन्दर ओ वे सुन्दर ! '

सुन्दर हां गुरू, निकल आओ !

(चेहरे से ४० का ; पर शरीर से ६० वर्ष के एक बूढे का प्रवेश। देखने से पहली विशेषता उसमें यह जान पड़ती ह कि बीती हुई को पूर्णतया भुला देने में वह दक्ष है और भविष्य की चिन्ता उसे कभी चिंतित नहीं करती)

वृद्ध अबे दिन भर घर ही में पडा रहता है ? जोरू का ...

(पार्वती को देख कर चुप हो जाता है)

पार्वती निकल मेरे घर से खूसट !

सुन्दर — अभी गोविन्द इधर से गया है !

वृद्ध — कौन गोविन्द, मेरा गोविन्द ? वह तो लीडर हो रहा है, आज तीन दिन से उन वकील साहब की बड़ी बातें सुनता है और रात-दिन वाही-तवाहियों की तरह बकता रहता है।

सुन्दर — कौन वकील साहब ? वही जो परेड पर रहते हैं, लड़कौंधे से ?

वृद्ध — वही चिबिल्ला, न जाने क्या-क्या कहता है। कहता है—हम सब बराबर हैं, भाई-भाई हैं, यह सब इनकी चालें हैं, भइया हम ने जमाना देखा है।—भाई-भाई हैं, तो व्याह दें अपनी बहन—मेरे लड़के के साथ।

पार्वती — अपने साथ क्यों नहीं कहता बुड्ढे।

वृद्ध — कहते हैं एका करो, एका करो, एका क्या खाक करें ! तुम तो एका कर लो—तुम ऐसी बातें करो और तुम्हारे भाई खून चूसने को तैयार !

पार्वती — तुमने अच्छी जान चाटी है—बढ़ाओ अपनी सवारी यहां से , उठो !

सुन्दर — क्या है री !

वृद्ध — है क्या, पागल है, सिर फिर गया है (धीरे से, सुन्दर

को जैसे संसार का भेद बता रहा हो) वकील साहब की ताक-झांक है !

सुन्दर — हूँ !

वृद्ध — चलो घूम आएँ।

पार्वती — हां-हा जाओ, आग लगे इस ताड़ी में !

सुन्दर — (आग्नेय नेत्रो से) बहुत जी न जला, ताड़ी की नानी !

दूसरा दृश्य

दिन वही। समय आठ बजे रात्रि।

(परेड पर कामरेड उमानाथ मिश्र का भव्य; पर साधारणतया सज्जित बंगला। उसके सिंह द्वार पर एक स्वस्तिका चिन्ह बना है, जो एक बीते हुए स्वप्न की भांति पूर्वजों के धार्मिक विश्वास का द्योतक है। भीतरी प्रवेश द्वार पर 'हंसिया और हथौड़ी' का खूनी चिन्ह अंकित है; पर वर्तमान द्रश्य में यह कुछ नहीं दीखता। एक कमरे में घर के मिश्र जी बाहर के कामरेड मिश्रा रिपोर्टों, ड्राफ्टो और अखबारो में फसे बैठे है। मि० मिश्रा की आयु ३० वर्ष के दाहिनी ओर, राजनैतिक विचार सहिष्णुता के बाईं ओर। खद्दर के कायल नहीं;

कांग्रेस को महात्मा गांधी एंड को० लिमिटेड मानने वाले। रुपये से जहां तक उसे कमाने का प्रश्न है निर्लिप्त नाम और काम दोनों के लोलुप)

मि० मिश्रा (धीमे स्वर में) मि० कपूर !

(एक गोरे गम्भीर चुस्त और चालाक आंखों में अविश्वास की आभा लिये एक अधेड़ मनुष्य का प्रवेश)

मि० मिश्रा (एक क्षण उनकी ओर देख कर) देखिए, उस मेनिफेस्टों को टाइप होते ही मि० रंगानाथम् के पास कवर ऐड्रेस से भेज दीजिए, कुली-बाजार में बड़ी-बड़ी दुकानो पर जा कर उन कुलियों के नाम नोट कर लीजिए, जिन पर पांच या पांच रुपये से ज्यादा कर्ज़ है। समझे आप, फिर बाद को.........

मि० कपूर (कुछ चिढ़ कर) जी हां, आज शाम को चला जाऊंगा।

मि० मिश्रा और सारे जरूरी और ऐसे-वैसे काग़ज़ात मेज पर ही रखियेगा, छिपा कर नहीं, शायद आज तलाशी आवे। रिपोर्ट सब गैरेज की आलमारी में डाल दीजिए।

(सहसा कार्लमार्क्स के आशीर्वाद के स्वर में उनके तैलचित्र के नीचे की घण्टी बजती है। मि०

कपूर और उनके मालिक दोनों चौंक उठते हैं और बाहर की ओर देखते हैं। दो क्षण में ब्येरा आ कर एक कार्ड देता है। मि० मिश्रा उसे दूर से ही देख कर संतोष की एक श्वास लेते हैं; पर अपने आन्तरिक भाव को भरसक छिपा कर आगन्तुक को लिवा लाने का इंगित करते हैं।)

मि० कपूर	जुगुलकिशोर मिल का वखेड़ा तै हो गया ?

मि० मिश्रा	तै कैसे हो ? पूजीपतियो के तो दांत तले हराम दव गया है ! रुपये की वहुतायत होने से उसकी असली क़ीमत उन्हें कैसे मालूम हो । १८ घण्टे १६ साल के वच्चो से काम लेते है। मेरे पीछे गुंडे लगवा दिये है ; सेठ है, रायवहादुर है, धर्म के ठेकेदार है, फैसला कैसे हो ?

(अन्तिम वाक्य के समाप्त होते ही सफेद सूट और सफेद हैट लगाये, व्यवसाय की वुद्धिमत्ता और जटिल आकृति के मि० मनोहर-स्वरूप अग्र-वाल का प्रवेश। मि० मिश्रा वड़े रूखे मन से उनका स्वागत करते है और उस से अधिक रूखे भाव से मि० कपूर से कहते है।)

मि० मिश्रा तो फिर आप जाइए। शाम को वहां जाना न भूलियेगा।

मि० अग्रवाल (मि० कपूर की ओर देख कर) मि० मिश्रा, क्या अपने ऑफ़िस में है ?

मि० मिश्रा (स्तंभित हो कर) क्या है जनाब, कहिए ? मैंने आप को नहीं पहचाना। मिस्टर मिश्रा तो मैं ही हूँ, शायद............

मि० अग्रवाल (अविचलित भाव से) मुझे अत्यन्त खेद है, मैंने आपकी कुछ और ही कल्पना कर रक्खी थी।

मि० मिश्रा (अप्रतिभ हो कर) मुझे खेद है।

मि० अग्रवाल खैर, मै जुगुलकिशोर मिल्स का प्रमुख पार्टनर हूँ, मेरा धर्म है—रुपया, मेरा ध्येय है संसार में अपने को निरापद और सुखी बनाना।

मि० मिश्रा मुझे बड़ा खेद है, मेरे जीवन में भावुकता का तनिक भी स्थान नहीं है।

मि० अग्रवाल सच! पर साम्यवाद तो एक वैज्ञानिक या अवैज्ञानिक भावुकता ही है।

मि० मिश्रा आप को यह ज्ञात होना चाहिए कि जो कुछ भी आप कह रहे है, उसका अर्थ आप तनिक भी नही समझते।

मि० अग्रवाल (जैसे भविष्यवाणी कर रहे हो) ठीक है। आप

बड़े चतुर हैं। आपने मेरे जीवन का एक भेद जान लिया; पर क्या आप समझते हैं, रुपया कमाने के लिए उसके अर्थ समझने की भी आवश्यकता है ?

मि० मिश्रा (घबरा कर) मि०......

मि० अग्रवाल (कृत्रिमता से) मनोहरस्वरूप अग्रवाल करोड़-पती! ......

मि० मिश्रा मैं आप से मतलब की बात करना चाहता हूँ।

मि० अग्रवाल मैं राई को राई कहता हूँ और पर्वत को पर्वत। मेरे आप के मध्य कोई मतलब की बात अस्वाभाविक है, मैं एक करोड़पती हूँ, आप एक कवि हैं।

मि० मिश्रा (चकित हो कर) मैं कवि!

मि० अग्रवाल हां कवि। एक साम्यवादी या तो एक पर्वत को राई में देखने वाला कवि है, या मुंह चढ़ा बालक!

मि० मिश्रा (व्यस्त होने की चेष्टा करके) मि० अग्रवाल, मुझे आज-कल समयाकाल है.........

मि० अग्रवाल अहा, अकाल! आप एक ट्रेड यूनियन बनाइए!

मि० मिश्रा मि० अग्रवाल, आप तो विचित्र पुरुष हैं! क्या आप यहां मेरा उपहास करने आये हैं? मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं तनिक भी अप्रतिभ न हूँगा।

आप कटु-से-कटु बातें कह सकते हैं। मेरे सिद्धान्त मेरे जीवन के अंग हैं; नहीं, नहीं, वे एक आवश्यक अवयव हैं............ मैंने शब्दो के माध्यम में विचार नहीं किया है, मैंने एक समस्या को दूसरी समस्या से हल नहीं किया है।'

मि० अग्रवाल (व्यग स्वर में) हा, यह ओजस्विनी कविता है !

मि० मिश्रा मि० अग्रवाल !

मि० अग्रवाल अच्छा-अच्छा आप कहिए।

मि० मिश्रा (दो क्षण रुक कर) मैं समाज का संगठन केवल एक शुद्ध आर्थिक रीति से चाहता हूँ।

मि० कपूर (जोश में) 'संसार के श्रमजीवियो, एक हो जाओ ! '

मि० अग्रवाल (उसी जोश में) संसार के जुआरियो, एक हो जाओ ! ससार के शराबियो, एक हो जाओ ! ससार के सूद-खोरो , एक हो जाओ !

मि० मिश्रा होपलेस (बेकार)

मि० अग्रवाल मि० मिश्रा, ऐसी कोई बात नहीं है, हम लाग केवल आप का वाक्य पूरा कर रहे थे।

मि० मिश्रा (उत्तेजित हो कर) क्या आप समझते हैं कि चोर या शराबी आर्थिक दृष्टि से एक विलग वर्ग हैं !

मि० अग्रवाल अवश्य। चोर तो एक आर्थिक जीव है।

मि० मिश्रा खैर, अगर हम यह भी मान ले......

मि० अग्रवाल अहा! यह कविता है—अगर हम यह कल्पना कर ले!

मि० मिश्रा (कठोर स्वर में) मुझे मालूम हो गया, मैं आप की मिल में हड़ताल करवा रहा हूँ, आप इस के लिए मुझे......

मि० अग्रवाल नहीं,नहीं मि० मिश्रा, मैं आप को विश्वास दिलाता हूँ, हम लोग मिल कल बन्द कर सकते है और बड़े-बड़े जुएखाने या शराबखाने खोल सकते हैं और तब फिर यह (मि० कपूर की ओर इंगित कर के) चिल्लाएंगे, संसार के जुआरियो एक हो जाओ!

मि० मिश्रा (बरबस) आप पागल हैं!

मि० अग्रवाल इस छत के नीचे सभी पागल हैं।

मि० मिश्रा (हताश हो कर) आप मुझ से क्या चाहते हैं?

मि० अग्रवाल (औपन्यासिक ढंग से) तो आप क्या चाहते हैं?

मि० मिश्रा (अत्यधिक उत्तेजना से) पूंजीपतियों का नाश! संसार को यह बतलाना कि एक श्रमजीवी की असली मजूरी उसकी मेहनत का फल है। कोई टैक्स नहीं, कोई लगान नहीं, कोई टिकट नहीं!

मि० अग्रवाल	(गम्भीर स्वर में) सुनता हूँ ऐसी कविता अमेरिका के किसी कवि ने की है, भला-सा नाम है—वाल्ट...

मि० मिश्रा	(लाल-लाल हो कर) आप यहा से निकल जाइए !

तीसरा दृश्य

(पूर्व परिचित कुलियो की बस्ती। जैसे किसी ने अभिमंत्रित कर निर्जीव कर दी हो। मकानों के आगे या विचित्र जगह मजूर बैठे विष के समान ताड़ी पी रहे हैं, बच्चे कभी डर से कभी माता की झुंझलाहट से और कभी एक अज्ञात आशंका से रो देते हैं और वह स्वर ऐसा ही तीव्र है जैसे चीलो का दोपहर की नीरवता में कीकना। भावी के समान आशंका की दृढ़ता सब के मुख पर अंकित है। मध्यान्ह के प्रखर आतप में जैसे विश्व मूर्छप्रायः हो रहा हो। सुन्दर के द्वार पर)

एक मजदूर	(सूर्य की किरणों से अपने नेत्र को बचा कर) यह फल होता है ! ढोल से खाल भी गई।

दूसरा	क्या बकते हो, आकर सिर न रगड़ें, तो मेरा नाम .....

(दूर से गोविन्द उत्तेजित-सा आ रहा है)

एक	यह सब उसी की कारस्तानी है, उसी ने तुझे तोते की तरह रटाया है। वही वकील !
गोविन्द	पास आकर ('मेरे मौला बुला ले मदीने' की लय में)—यारो वतन हमारा है, औ, हम वतन के हैं।—दुनिया के मज़दूरो एक हो जाओ।
पहला	अबे झक्की बातून, इस मशीन की तरह बात करने से क्या होगा, हम सब एक हैं, बता एक हो कर हम क्या कर सकते हैं ?
दूसरा	सुनते है मिल में अभी भरती पूरी नहीं हुई।
गोविन्द	(एक ग्रामोफोन के समान) दुनिया के मजूरो, एक हो जाओ !
तीसरा	चुप भी रह भाई.........
पहला	(निराश हो कर) सिवा इसके कि हम शहर में जाकर लूट-मार मचा दें, हम और क्या कर सकते हैं।
गोविन्द	भाइयो, तकलीफ सहो.........
दूसरा	क्यों सहें, इसका फल क्या होगा ?
गोविन्द	संसार के मजदूरो एक हो जाओ !
पहला	संसार में तो सभी मजूर हैं, रे गोविन्द रुपये की जरूरत तो सब को मजूर बनाये हुए है, तू कैसे कहता है—

जहान के मजूर एक नहीं हैं; लेकिन एक होकर हम क्या करें?

(एक नया मजूरा आता है, लोग मृत्यु के दूत के समान उसका स्वागत करते हैं।)

पहला — क्यों रे क्या खबर लाया, कुछ कहेगा भी।

नया मजदूर — नये मजूर आठ रुपये ही में भरती हो रहे हैं; लेकिन लेकिन हड़ताल करने को नहीं तैयार है।

दूसरा — भरत पूरी हो गई?

नया — (अभिशाप के स्वर में) हां, कल ही सुनते हैं। मनोहर बाबू भाड़ा देकर इन कुलियों को बाहर से लाये हैं। देखें गुरु बाते कर रहे हैं, शायद कोई नई खबर लाएं।

पहला — और वह वकील साहब?

नया — वह कह रहे हैं कि मैंने भूल की, अभी मौका-महल नहीं था।

दूसरा — छि:!

(इसी बीच सुन्दर भी आ जाता है। उसके क्लान्त और झुलसे हुए मुख पर क्रोध और शोक की उदासीनता, मटमैली और हिंसक आखो में दृढ़ता, और वाणी में कृत्रिम प्रफुल्लता है।)

सुन्दर — भाई मेरा तो काम हो गया, मैं जा रहा हूँ। मैं परेड

पर नौकर हो गया। वकील साहब ने पार्वती से कहा---तुम बाल-बच्चो को लेकर यहीं रहो, १० का महीना और दोनो की खुराक। और क्या!

(लोग उसकी मुद्रा देख कर चकित हो जाते हैं। कुछ उसकी ओर आश्चर्य, कुछ भेद-पूर्ण और कुछ सहानुभूति से देखते है और एक-एक कर के चल देते है।)

सुन्दर (बैठते हुए) पार्वती जरा-सा पानी ले आ।

पार्वती भीतर न चलो, धूप से तो चले आ रहे हो।

सुन्दर नही पार्वती, धूप से चलने के बाद छाया नही......

पार्वती (कुछ हिचकिचाहट के साथ) तुम कैसे हो रहे हो?

सुन्दर कैसा भी नहीं, अभी परेड से आ रहा हूँ।

(पार्वती जैसे प्रेत से डर गई हो)

बाबू ने कहा कि दस रुपये महीने की नौकरी दी और खाना और रहने को जगह। आज शाम से हमारा नया जनम होगा।

पार्वती (कठिनता से) अगर तुम्हारा जी न पतियाता हो, तो न चलो।

सुन्दर पागल हुई है, न चलूंगा, तो क्या भूखो मरूँगा।

(दो क्षण गम्भीर नीरवता रहती है ; पर उस नीरवता में ही दोनो एक दूसरे का अर्थ समझ लेते है)

सुन्दर — औरत की जात—या तो मजा उड़ाती है, या न उड़ाने के लिए पछताती है।

पार्वती — (सिर नीचा किये, पैर के नाखुन से जमीन खोद रही है)

सुन्दर — मैं नहीं चाहता कि तू भी पछताए। खाली इसलिए कि तूने मुझ से सादी की।

पार्वती — (मन दृढ़ कर) तो क्या तुम्हारा-हमारा कोई ताल्लुक नहीं?

सुन्दर — (हंस कर) तेरे साथ ८ बरस से रह रहा हूँ, इस झोपड़ी में २८ बरस रहा हूँ; पर आज यह झोपड़ी कैसी जल्दी छूटी जा रही है!

पार्वती — मैं नहीं समझी।

सुन्दर — मैं समझ गया, तू नहीं समझी! (उत्तेजित हो कर) अगर मैं न समझता, तो खून हो जाता, मेरे गले में रस्सी होती.........

पार्वती — (डर के) फिर!

सुन्दर — फिर क्या, मेरी सब समझ में अया, मैं और वकील साहब बराबर हैं, मेरे पास रुपया नहीं है, जिन्दा रहने के लिए उनके रूपये की मुझे जरूरत है, मेरी जोरू...

पार्वती — (त्रस्त) बस-बस मैं तुम्हारे साथ जोड़ती हूँ।

चौथा दृश्य

एक सप्ताह के बाद

(मि० मिश्रा का वही कमरा, जो अज्ञात यौवना के समान स्वयं अपने परिवर्त्तन पर चकित है। कार्ल-मार्क्स के चित्र की जगह कृष्ण के एक रसीले चित्र ने ले ली है। ड्राफ्टो, रिपोर्टों का स्थान अंग्रेजी के उपन्यासों ने। इस परिवर्तन में यदि तनिक भी अस्वाभाविकता की छाप हो, तो आप मि० मिश्रा को देख लें, जो एक रेशमी सूट को हिन्दुस्तानी ढंग से पहने, बालों में बीच से मांग काढ़ अभी-अभी आकर बैठे हैं)

मि० मिश्रा — (अन्दर की ओर झांक कर) मि० कपूर! (उत्तर की अपेक्षा न कर के) सौलमन कम्पनी को लिख दीजिए कि जिस ब्रुइक का उन्होंने कल ट्राइल दिया था, वह आज पहुँचा दे।

(इसके पश्चात् ५ मिनट। मि० मिश्रा बैठे-बैठे गुनगुना रहे हैं और उनके ठीक पीछे से मि० कपूर आते हैं)

मि० कपूर — कम्पनी के एजेण्ट आये हैं, आप उन्हें रुपया देकर कन्ट्राक्ट साइन करवा लीजिए। कार तो यहीं उनकी सिटी गैरेज में है।

मि० मिश्रा अच्छा ... उसे लिख कर टाइप कीजिए।

(मि० मिश्रा कुछ देर बाद अलस भाव से आकर कोने की ओर जाते हैं, पर जैसे उन्होंने अपना ही प्रेत देख लिया हो, डर कर पीछे हटते हैं। दूसरे क्षण वह आगे से टूटे हुए सेफ को एक गूढ़ रहस्य के समान देखते हैं। सहसा वह उसमें से एक पुराना अखबार का कागज उठा लेते हैं, जिस पर सबल और विश्वास युक्त टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखा है—'सुन्दर'। पीछे पार्वती जुन्हाई के समान बेल-बूटों की साड़ी पहने एक तश्तरी में कुछ फल लिये मुस्कराती खड़ी है मिस्टर मिश्रा उसकी ओर मुड़ कर देखते वह उनकी इस विचित्र मुद्रा को देख कर चकित होती है। मि० मिश्रा बाहर बरामदे में जाकर फोन को कान में लगा कर बिना घण्टी बजाये कहते हैं।

'हेलो-हेलो! कोतवाली, पुलिस, मि० हिनट!'

(पार्वती उनकी ओर और संसार की ओर विस्मय से देख रही है। दबे पांव चोर के समान मिस्टर मिश्रा के विश्वस्त नौकर का प्रवेश। वह पार्वती की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि दे देखता है)

नौकर सुन्दर को न जाने क्या हो गया, वह सबेरे तड़के ही चला गया। आपसे कही सुनी माफ करा गया है।

"शैतान"

(उत्तरी प्रान्त के एक छोटे-से नगर की तंग गलियों में बड़ी-सी परन्तु १९वीं शताब्दी की एक कोठी के जनाने भाग का एक कमरा; दीवारें बेलबूटेदार कागज से मढी है, छत में सफेद चादर तनी है कमरे की ज़मीन में एक चटाई और एर उसके ऊपर एक पुराना कालीन है, जो कमरे के लिए कुछ छोटा है। दो खिड़कियो में से एक खिड़की वन्द है। और तीन दरवाजो में तीनों खुले है, जो दृष्टि को सामने की छोटी-सी फुलवारी तक ले जाते है।

कमरे में संध्या-बेला के समान एक निस्तब्धता छाई है, जिसको भंग करते हुए एक पुरुष कहता है।)

पुरुष का स्वर — वह कल शाम को भी चला होगा तो आज आ जायगा।

दूसरा स्वर — कैसे आ जायगा? क्या उड़ जायगा—तार कब का चला हुआ है?

पुरुष — कल सवेरे का भाई! (कुछ देर नीरव रह कर) तो अव तुम क्या करने को कहती हो?

स्त्री — मै क्या जानूं जी, मै तो पहिले ही मना करती थी।

पुरुष — खैर, अब क्या करना चाहिए ? हालांकि विल हमारे नाम है; पर न्याय से तो यह सब उसीका है।

स्त्री — (एक दीर्घ निःश्वास लेती है) इतने वर्षों तक वह क्या करता रहा। उसके धर्म-कर्म का भी कुछ ठिकाना है ?

पुरुष — अब तो वह आ ही रहा है और अपने भी मित्रो से वैरी ही अधिक है। अधिकारियों से भी मैंने वैमनस्य ही-सा कर रखा है।

स्त्री — मैं तो रूखे-सूखे में ही प्रसन्न थी और हूँ, मुझे धन-ऐश्वर्य और रियासत न चाहिए थी, और न है। तुम जिसमें सुखी हो, उसमें मेरा सुख है।

पुरुष — यदि उसने अपना धर्म बदल दिया है, तो वह रियासत नहीं पा सकता।

स्त्री — (उत्साह को छिपा कर) परमात्मा जाने कब से तो वह लापता था, क्या जाने......

पुरुष — कब से क्या १०-११ साल हो गये होंगे। सोलह वर्ष की आयु में ही तो वह वहां से भाग गया था, कैसा विचित्र लड़का है, दुनिया का कोई ऐब ऐसा नहीं, जो उनमें न हो। मामा जी इसी दुःख में घुल-घुल कर मर गये।

स्त्री मैंने तो उसे जब देखा था, कितना सुन्दर और होनहार था; पर विधाता के खेल......

पुरुष यदि उसने धर्म बदल दिया......

स्त्री उसका क्या ठीक है! वह संसार में सब कुछ कर सकता है।

(सहसा आपत्ति के समान एक २६-२७ वर्ष के युवक का प्रवेश, उसके बाल रूखे और बिखरे, नेत्र काले और विष के समान गंभीर हैं, वस्त्र बहुमूल्य पर अस्तव्यस्त। आते ही वह कुछ त्रस्त हो जाता है और लौट जाना चाहता है; पर सहसा पुरुष और स्त्री खड़े हो जाते हैं और अपने को किसी भी परिस्थिति के लिए दृढ़ बनाते हैं)

युवक (शराबियों की चाल और स्वर में उस पुरुष के पास जाता है।) मैं क्या अपने पिता के भांजे और उत्तरा-धिकारी राजा हरदेव सिंह से बात कर रहा हूँ?

हरदेव सिंह अवश्य! तुम क्या राजेन हो? कब आये? सवारी तो स्टेशन पर न मिली होगी? घर की सवारी मेरा मतलब।

राजन (स्त्री की ओर आंख फाड़ कर देखता है) यह क्या भाभी साहबा है?

(स्त्री जैसे अपने को शीतला, प्लेग या धूप से बचा रही हो)

हरदेव सिंह तुम कितनो दिनो बाद आये हो राजेन? तुम्हारा मन कैसा हो रहा होगा?

राजेन कैसा भी नहीं, मेरे लिए तो समय गतिविहीन है। मेरे लिए तो दुनिया जैसी दस वर्ष पहले थी, वैसी ही अब भी है।

हरदेव सिंह (विस्मित हो कर) देखता हूँ, तुमने काफी विद्या ग्रहण की है।

राजेन (हँस कर) विद्या—वह अपाहिजों के लिए होती है, मैंने जीवन का रहस्य जान लिया है।

(हरदेव सिंह घृणा-पूर्ण हँसी से इसका स्वागत करते है और उनकी पत्नी एक व्यंग-दृष्टि से)

हरदेव सिंह खैर, अब तुम्हारा क्या इरादा है? मामा जी की मृत्यु के बाद......

राजेन (जैसे उससे किसी ने परमात्मा का स्वरूप पूछ लिया हो) मेरा इरादा!—मैं क्या कह दूं?

स्त्री (जैसे मृत्यु का आवाहन सुना रही हों) हम लोग जानना चाहते है कि तुम्हारा क्या धर्म है?

राजेन (उत्साहित-सा) मैं एक बड़ी स्टेट का उत्तराधिकारी

हूं, यही मेरा धर्म है।

स्त्री मैं यह पूछती हूँ कि तुम हिन्दू हो?

राजेन मैं यह नहीं कह सकता, मैं यह नहीं जानता, हिन्दू किसको कहते है ?

स्त्री (ऊब कर) तुम्हारा ईश्वर पर, आर्य-संस्कृति और अपने पूर्वजो के धर्म पर विश्वास है?

राजेन भाभी जी! (वह जैसे सन्नाटे में आ गई है)

हरदेव सिह हम तुम्हारा धार्मिक विश्वास पूछते है, तुम हिन्दुओं के ईश्वर को मानते हो?

राजेन मैं एक ऐसे ईश्वर को मानता हूँ, जो समस्त मानव-धर्म और जाति का विधायक और पोषक है।

स्त्री (उत्साहित हो कर) ब्रह्म!

राजेन (दृढ़ता के साथ) रुपया!

हरदेव सिह और उनकी स्त्री एक साथ—रुपया! रुपया!

राजेन रुपया!

स्त्री तुम ब्रह्मा, विष्णु और महेश के प्रति श्रद्धा रखते हो?

राजेन (उसकी ओर देख कर) मैं देखता हूँ कि मेरे या अपने दुर्भाग्य से तुम उन स्त्रियों में हो, जो अच्छी कही जाती हैं! भाभी! हमारे जीवन में श्रद्धा का स्थान

ही नहीं है—नहीं, उसकी आवश्यकता ही नहीं है।

मैं जीवन के लिये, आनन्द के लिये और शक्ति के लिये जी रहा हूँ।

(स्त्री घृणा से सिहर उठती है, कमरे का वायु-मण्डल फिर अभिमन्त्रित-सा हो जाता है, सहसा एक नौकर दबे पांव हरदेव-सिंह के सामने अदब से खड़ा हो जाता है)

नौकर — (दो क्षण हांफ कर) बाहर एक साहब आये है और जो बाबू अभी आये हैं, उनसे मिलना चाहते हैं।

राजेन — (उसकी ओर घूम और घूर कर) वह क्यो मिलना चाहते हैं ?

नौकर — (कठिनता से) वह कहते हैं कि आप के साथ धोखे से उनका सोने का गिलौरी-दान आ गया है, उन्होंने आपको रेल पर उसे दिया था।

राजेन — (निर्विकार भाव से) गिलौरीदान! अच्छा, वह उनका था (जेब से एक कागज़ निकालते हुए) यह दूकान चौक में है, ५० रुपया दे कर वह उसे छुड़ा सकते है। उनसे कह दो, अच्छा !

(सब स्तंभित और चकित हो कर उसकी ओर देखते हैं, एक कठ-पुतली के समान नौकर वहां से चल देता है)

हरदेव सिंह (असहः नीरवता भंग करते हुए) देखो भाई, मामा जी ने विल हमारे नाम की थी; पर मुझे तुम्हारा यह कुछ न चाहिए। तुम्हे मालूम है (अपने खद्दर के वस्त्र देख कर) तुम्हें मालूम है, मैं देश के लिये अपना सब कुछ बलि कर सकता हूं। मेरे सिर से यह बला टलेगी।

स्त्री हमें अपनी निर्धनता ही प्यारी है।

राजेन (उत्तेजित-सा) तुम नास्तिक हो, अधार्मिक हो, मैं कहूँगा तुम मक्कार हो!

स्त्री और हर० तुम पागल तो नहीं हो गये! देखो शान्ति से बात करो।

राजेन (वैसे ही) नहीं, नहीं, तुम्हारा यह आघात मैं नहीं सहन कर सकता, तुम यह सब कुछ मेरे लिये छोड़ कर मुझे मेरी ही दृष्टि में हीन बनाना चाहते हो, तुम मेरे जीवन में एक भद्दी भावुकता भर कर मेरा जीवन नष्ट करना चाहते हो।

हरदेव सिंह निर्धनता ही हमारा धर्म है।

राजेन	निर्धनता धर्म नहीं, सब से गुरु और निर्दय पाप है, वह एक अपराध है, जिसका दण्ड फांसी होना चाहिए? मेरा विश्वास है कि जो स्वयं निर्धनता का आलिगन करता है, उसको धन की सब से अधिक आवश्यकता है, वह मान-प्रतिष्ठा का भूखा है, जो धन का दूसरा रूप है।

हरदेव सिंह	ठाकुर राजेन्द्रसिंह साहब, मैं आप से आयु में बड़ा हूँ!

राजेन	तुम आयु में बड़े हो—अरे मैं सृष्टि से भी पुरातन हूँ, मैं सत हूँ, मैं चित हूँ, मैं यदि सृष्टि बनाता, तो उसे इतनी अपूर्ण न बनाता। मैं यदि समाज का संगठन करता, तो निर्धन फांसी पर लटका दिये जाते! मैं शैतान हूं—

ह० और उनकी स्त्री	(विस्मय से) शैतान!

राजेन	हां, यही मेरा वास्तव स्वरूप है, पहले मैं उससे डरता था, दूर भागता था; अर्थात् अपने आप से दूर भागता था। मैं सुन्दर और पुण्य पर विश्वास करता था और एक कुत्सित पापी था; पर मैंने जब जाना है कि मैं शैतान हूँ, मैं जीवन हूँ, मैं तुम्हारे सुन्दर परमात्मा का स्वामी और विधायक स्वयंभू और अमर हूँ, मैं पाप-पुण्य से परे हूँ...

हरदेव सिंह — (आज्ञा के स्वर में) देखता हूँ, तुम शराब भी पीते हो ?

राजेन — देखता हूँ, तुम में केवल बुद्धि-ही-बुद्धि है, कल्पना का लेश भी नहीं है।

स्त्री — (जैसे स्वप्न से जाग कर) कितना तो अंधेरा हो रहा है, चलो बाहर चलो !

(तीनों मंत्र-मुग्ध के समान बाहर जाते हैं)

दूसरा दृश्य (फुलवारी, में जो रात्रि के वक्षस्थल से चिपट अर्द्ध निद्रित, भय से या आशंका से कांप रही है, रात्रि के श्रमकन के समान तारे अपने ही भार से व्यथित है, एक ओर राजा हरदेव सिंह उनकी धर्मपत्नी और राजेन्द्र प्रेतों के समान दिखलाई देते हैं। राजा साहब एक पुरानी कामदार कुरसी पर बैठे हैं। राजेन्द्र थोड़ी दूर पर गुलाब की पंखड़ियों को अपने दांतों से नोच-नोच कर पृथ्वी पर फेंकता है, उसके पीछे ही एक ख़ाली कुरसी है, जिसके ठीक दाहिनी ओर एक बेंच है, जिस पर राजा साहब की धर्म-पत्नी अधलेटी है।)

स्त्री — (उदासीनता से) हम लोग हरिद्वार चले जायँगे।

राजेन — (विश्रंखल हँसी हँस कर) क्यों ?

हरदेव सिंह हम तुम्हारी छाया से बचना चाहते हैं ।

राजेन क्यो ?

हरदेव सिंह हमारे आत्मा है, हम उसका धन और ऐश्वर्य के लिए हनन नहीं कर सकते।

राजेन क्या तुम समझते हो, मेरे आत्मा नहीं है ?

हरदेव नहीं, तुममे शब्द है, शब्द, शब्द, शब्द !

राजेन शब्द और संज्ञा के अतिरिक्त इस संसार में और क्या है ?

हरदेव कुछ भी हो, तुम अपना सब कुछ संभालो भाई, मैं निर्द्वन्द हो कर देश की सेवा करना चाहता हूँ।

राजेन इसके लिए तुम्हे धन की आवश्यकता है।

हरदेव (एक शहीद के स्वर में) इसके लिए सच्छाई, पवित्रता, विवेक और बलिदान की आवश्यकता है !

राजेन मै अपने धन से तुम्हारी बड़ी से बड़ी राजनैतिक संस्था को खरीद सकता हूँ।

हरदेव (हत होकर) तुम जीवन को उतना ही कम समझ पाते हो, जितना मैं तुम्हे।

राजेन मै स्वयं जीवन हूँ, विश्वात्मा मेरी आत्मा का अंश है ?

हरदेव सिंह मैं यह तुम्हारी पागलों की-सी बात नहीं सुन सकता।

(वह धीरे-धीरे उठ कर वृक्षो के झुरमुट में विलीन
हो जाते हैं, राजेन बेंच तक जाता है, स्त्री
उदासीनता से उसकी ओर देखती है
राजेन दूर एक मेहदी की
झाड़ी से खेलता है)

राजेन — आपने मुझे पहले भी देखा था ?

स्त्री — (रूखे भाव से) नहीं, मैं तुम्हे नहीं जानती, तुम्हें कौन जान सकता है, तुम स्वयं ही अपने अपवाद हो।

राजेन — खैर, इन बातो को छोड़ो, मैं स्वयं अपने आप को नहीं जानता हूँ और न मुझे जानने की आवश्यकता है। इस समय प्रतीत होता है कि मुझ में और तुम में कुछ समानता है।

स्त्री — (उठ कर रोष में) मुझ में और तुम में समानता ??

राजेन — क्यो, क्या हुआ, राम रावण में भी तो कुछ समानता थी। दोनों सीता को चाहते थे, दोनों ने उसको पाने के लिये निन्द्य-से-निन्द्य और जघन्य कर्म किये हैं। मुझे विश्वास है, तुम मुझे जानती हो।

स्त्री — तुम चुप रहो, मैं तुम्हे नहीं जानती, यदि तुम न चुप होगे, तो मैं यहां से चली जाऊंगी।

राजेन (जैसे एक स्वप्न देख रहा हो) लोगों ने मुझ से कहा, तुम्हारे एक आत्मा है, जैसे माता अपने उनींदे बालक को हौआ कह कर डराती है, वैसे ही संसार ने मुझे आत्मा और परमात्मा के हौआ से डराना चाहा और मैं स्वयं अपने आप से बहुत दूर चला गया। पाप मेरे लिये एक वर्जित फल था, मैंने उसे लुक कर छिप छिप कर चखा और अपने जीवन के एकत्र भाव को नष्ट कर दिया; पर अब मैं स्वयं पाप हूँ, मैं सत् हूँ, चित हूँ, मैं स्वयं विश्व की व्यापक आत्मा हूँ; क्योंकि मैं ही उसे पूर्ण बनाता हूँ।

स्त्री (पीड़ित-सी) तुम पागल हो!

राजेन आह! इस स्वर में मेरे लिए कोई रहस्य छिपा हुआ है, मैं उसे जान क्यों नहीं पाता? अवश्य तुम मेरी पूर्व-परिचित हो। सृष्टि के अव्यक्त काल में भी मैं तुम्हें जानता था, मैं न जाने कब से तुम्हें पहचानने की चेष्टा कर रहा हूँ।

स्त्री हिश! तुम ने मुझे आज पहली बार देखा है।

राजेन (निर्विकार भाव से) मेरे लिए समय गतिहीन है, मैं शैतान हूँ।

स्त्री (उत्तेजितसी) तुम यहा से चले जाओ, मैं आत्म-

घात कर लूंगी—नवाबसिंह ! म (पुकारती है)

राजेन (उस से दूर जा कर) कुछ नहीं तुम रात्रि के समान रहस्यमयी हो, तुम संसार के पापों की नग्न स्वरूप हो......

स्त्री (अत्यधिक उत्तेजना के साथ) नवाबसिंह चौंकीदार !

(राजेन हताश-भाव से दूर की कुरसी पर बैठ जाता है। पाच मिनट को जैसे वे दोनों रात्रि की नीरवता में खो जाते हैं)

राजेन यदि यहां पर कोई इस समय आ जाय, तो मुझ को तुम्हारा पति समझे ।

स्त्री (चौंक कर) तुम्हारा क्या अर्थ है,...दुष्ट !

राजेन तुम मेरी ओर से उदासीन रह सकती हो; पर मुझे घृणा मत करो। स्त्री की घृणा पुरुष पर बलात्कार है, मैं एक सादी-सी बात कह रहा हूँ, यदि यहां पर कोई इस समय आ जाय, तो तुम्हें मेरी धर्मपत्नी समझे।

स्त्री क्या तुम मेरे पति से अपने आप को अधिक योग्य समझते हो ?

राजेन मैं केवल एक बात कह रहा हूँ।

स्त्री पर तुम मेरा और मेरे पति का अपमान कर रहे हो !

राजेन कदापि नहीं !

स्त्री — तुम अवश्य अपने आपको मेरे पति से अधिक योग्य समझते हो, तुम कह रहे थे कि मुझमें और तुममें समानता है।

राजेन — यह ठीक है, ठीक है, हम दोनो ही तुम्हारे अयोग्य है और.........

स्त्री — (कठोर स्वर में) क्यो?

राजेन — क्योकि तुम उसे प्रेम करती हो कि वह तुम्हारे जीवन का एक आवश्यक अंग है और मुझे घृणा करती हो कि मेरी आवश्यकता तुम को नहीं है।

स्त्री — यदि तुम्हारे बिना मेरा जीवन नितान्त असंभव भी हो जाय, तब भी मैं तुम्हे प्रेम न करूँ; पर (लज्जित होकर) नहीं, मुझे यह न चाहिए। तुम्हारे-हमारे बीच प्रेम का ज़िक्र तक होना अस्वाभाविक है।

राजेन — क्यो, हम दोनों एक दूसरे को नहीं पहचानते है?

(सहसा खड़ाके के साथ बाहर का फाटक खुलता है, दोनो अकारण चौंक कर उस ओर देखते है, दूर पर कुछ लोगो के धीमे स्वर में बोलने की आवाज़ आती है, स्त्री डर कर उठ खड़ी होती है बाहर से आवाज आती है)

पहला स्वर (आज्ञा का) तुम दो यहीं खड़े रहो, दो मेरे साथ आओ, बाकी दरवाजे पर चले जाओ, इधर-उधर भी निगाह रखना।

(स्त्री राजेन के पास आ जाती है, राजेन विस्मय के साथ बाहर की ओर देख रहा है कि सहसा एक भारतीय सारजेण्ट दृढ़ता के साथ दो सिपाहियों को लिये आता है, पीछे घर का नौकर है, जो भाग्य के समान कांप रहा है)

सारजेण्ट (राजेन के पास जा कर) मै बादशाह सलामत के नाम पर आपको राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार करता हूँ। ठाकुर हरदेव सिंह आपका ही नाम है।

राजेन (अपूर्व दृढ़ता के साथ) मै तैयार हूँ। हां, यह मेरा ही नाम है।

(राजेन पास ही की कुर्सी से राजा हरदेव सिंह की गांधी टोपी उठा कर लगा लेता है, स्त्री उसकी ओर विस्मय से नहीं, भय से नहीं, आपत्ति से नहीं, वरन् कातरता से देखती है)

राजेन (सारजेण्ट के पास आकर) मै तैयार हूँ।

सारजेण्ट यह सरकारी आज्ञा है; पर हमें इतनी जल्दी नहीं है,

आप अपना बन्दोबस्त कर लीजिए। अपनी पत्नी से विदा ले लीजिए।

राजेन (मुस्करा कर) इसकी क्या आवश्यकता! अभी तो मुकदमें में ही कितने दिन लग जायंगे।

सारजेण्ट (उच्च स्वर में) हां, घबराने की कोई बात नहीं है (धीमें स्वर में) मुझे खेद है, मुझे कहना तो न चाहिए पर मैं आप से कह देता हूँ कि सवेरा होते-होते आप लोग सब एक अज्ञात स्थान को भेज दिये जायंगे।

(राजेन मुड कर स्त्री के पास तक जाता है, वह पत्थर की मूर्ति के समान निश्चल खड़ी है। राजेन उसका हाथ अपने हाथो में ले लेता है।)

राजेन देखो घबराने की कोई बात नहीं। हमारे उन मित्र को, जो यहां थे, चेता देना कि हम दोनों ही तुम्हारे अयोग्य है। अच्छा विदा।

(राजेन उस मृत्यु से शीतल हाथ को अपने गर्म ओठों तक ले जाना चाहता है; पर सहसा वह हाथ छुड़ा कर उसके गले में बांह डाल कर उसके ओठों को चूम लेती है, और आहत होकर गिर पड़ती है।)

" प्रतिभा का विवाह "

उत्तरी भारत में एक छोटा सा रमणीक पर्वतीय स्थान। पत्थर की छोटी-छोटी हवेलियों के मध्य एक अपरचित के समान लाल डाक-बंगला जिसके उत्तर ओर के बरामदे में सूर्य की मूर्षप्रायः किरनों में नहाई एक अठारह वर्ष की बालिका बैठी है। उसके आकृति में इस समय एक असंगत निरुत्साह और क्षोभ है, अर्थात वह अपने समस्त सौन्दर्य के साथ किसी को आकर्षित करने में असमर्थ है। भीतर से एक व्यस्त आवाज़ आती है)

आवाज़ — आप की टिमाटर की चटनी तैयार है मैं कागजी निचोड़ कर रख दूं। रोटी भी काटे लेती हूँ।

बालिका — हूँ।

आवाज़ — क्या बीबी पथरचटी ही तो गये है न जाने कब आवेंगे?

बालिका — मैं क्या ज्योतिष जानती हूँ तुम कितनी बातून हो॥

आवाज़ — यहां दाल तो गलना जानती ही नहीं, आलू इतने गल गये हैं कि उनका कुछ बन ही नहीं सकता, कोई सीधे मुंह बात ही नहीं करता न जाने कैसा देश है?

(बालिका खीझ कर टहलने लगती है और बाहर

छोटे फाटक तक जाकर लौटा ही चाहती है कि कुछ पद चाप सुन कर ठिठक जाती है दूसरे ही क्षण दो अधेड पुरुष भारी ओवरकोट पहने प्रवेश करते हैं पहला बालिका को देख कर अप्रतिभ हो जाता है, पर मनोगत विचारो को भरसक दबा कर दूसरी ओर देखने लगता है दूसरा पास आकर स्नेह के स्वर में कहता है)

दूसरा — क्यो प्रतिभा इतनी सर्दी में शाल भी नहीं है।

प्रतिभा — (स्नेह) जी नहीं पापा मैं आप की राह देख रही थी।

पहला पुरुष — वहां से आकर हमारा बंगला कितना नीरस दीखता है।

दूसरा पुरुष — बड़ा सुन्दर स्थान है मुन्नी तेरी तबियत ठीक होते ही हम वहा चलेंगे।

प्रतिभा — मुझे अब प्रकृति के हृदयहीन सौन्दर्य में तनिक भी रस नहीं है मानव प्रकृति कहीं अधिक सुन्दर है।

दूसरा पुरुष — अच्छा अच्छा इसी तरह तो दिन रात सोच कर स्वास्थ सत्यानाश कर लिया।

पहला — अच्छा अब चलिये मिस्टर मोहन मैं चूर हो गया हूँ आप तो अभी जवान है।

मिस्टर मोहन — (फैशनेबल हसी हंस कर) खैर हम बूढे ही आज कल के जवानो से अच्छे हैं।

प्रतिभा — अच्छा आप पापा यह बात कितनी बार कह चुके हैं।

(तीनों बरामदे की ओर चल देते हैं)

मिस्टर मोहन — (सहसा ठिठक कर) हमने आज मिसेज़ जोशी को क्या समय दिया था?

मिस्टर वर्मा — मुझे तनिक भी ध्यान नहीं है पर मिसेज़ जोशी तो आज रानी खेत गई होगी।

प्रतिभा — नहीं उन्होंने विचार बदल दिया था।

(बरामदे में पहुँच कर मिस्टर वर्मा कुर्सी पर बैठ जाते है भीतर से एक खाली कुर्सी खसीट कर मिस्टर मोहन ठीक उनके सामने बैठते है, प्रतिभा अप्रतिभ बाहर की ओर देखती है)

मिस्टर वर्मा — मिसेज़ जोशी को मैंने आज बीस वर्ष बाद देखा। पिछली बार जब वह तुम्हारे साथ लखनऊ में थी......

(मिस्टर मोहन उनको एक विचलित इंगित से से रोकते हैं प्रतिभा मथंर गति अंदर चली जाती है)

मिस्टर मोहन — (दयनीय भाव से) यार प्रकाश तुम कैसे आदमी हो प्रतिभा भला क्या समझे थीं?

मिस्टर वर्मा — आनन्द प्रतिभा इस विषय में जो कुछ समझ सकती थीं समझ चुकी।

मिस्टर मोहन क्या समझ चुकी ?

मिस्टर वर्मा यही कि एक स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध या तो आर्थिक है या कामुक ।

मिस्टर मोहन कुछ भी हो पर मैंने अपना और मिसेज़ जोशी का सम्बन्ध प्रतिभा से प्राणपण से छिपा कर रक्खा है।

मिस्टर वर्मा पर तुम नहीं समझते तुम इस प्रकार मुझे क्षति पहुँचा रहे हो।

मिस्टर मोहन (आकाश से गिर कर) तुम्हे क्षति!!

मिस्टर वर्मा (अविचिलित भाव से) हां क्योंकि मैं प्रतिभा से विवाह करना चाहता हूँ।

मिस्टर मोहन (जैसा उनका अपने अस्तित्व पर ही विश्वास न हो) विवाह !

मिस्टर वर्मा तुम मेरी आयु की ओर देख रहे हो।

मिस्टर मोहन प्रकाश तुम मेरे तीस वर्ष से मित्र हो......

मिस्टर वर्मा फिर अपनी एक मात्र पुत्री के लिये तुम्हें मुझ से अधिक योग्य वर कौन मिलेगा ?

मिस्टर वर्मा आनन्द मैं प्रतिभा को चाहता हूं मैं वास्तव में उसे चाहता हूँ।

मिस्टर मोहन तुम उसे अपनी पुत्री के समान प्रेम कर सकते हो, वह तुम्हारा कम आदर नहीं करती ।

मिस्टर वर्मा पुत्री के समान पर मैं तो प्रतिभा से विवाह करना चाहता हूँ......

(मिसेज् जोशी का प्रवेश; अपने आप से दश वर्ष छोटी गोल गोरे चेहरे पर विलास की प्रस्फुट विलासिता जो अधरो पर और भी अधिक स्पष्ट और मुखर हो गई है, एक काला चेस्टर पहने तौल तौल कर पग रखती हुई आती है। मिस्टर मोहन खड़े हो कर स्वागत करते है और अपनी कुर्सी पर बैठा कर दूसरी कुर्सी लेने भीतर जाते हैं)

मिस्टर वर्मा आप तो आज रानी खेत जाने वाली थीं......

मिसेज जोशी (बैठते हुए) हां मैंने अपना विचार बदल दिया था!

(दो क्षण गम्भीर नीरवता रहती है)

मिस्टर वर्मा समय आप लोगों के साथ कितना पक्षपात करता है मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि आप की आयु पचीस वर्ष से अधिक नहीं जचती।

मिस्टर मोहन (एक सामाजिक झेंप के साथ) कमसकम इतने के लिये तो मैं भी सौगंध खा सकती हूँ कि आप भी सौ वर्ष के नहीं दीखते।

मिस्टर वर्मा (वेग से हंस कर जो उत्तरार्ध में खासी हो जाती है) यह सौगन्ध तो आनन्द भी खाने को तैयार है

(मिस्टर मोहन एक कुर्सी लेकर आते है और ठीक मि० वर्मा और मिसेज जोशी के बीच में बैठ जाते है)

मिस्टर जोशी (स्वर को तौल कर) यहां आते हुय मैंने आपका अन्तिम वाक्य सुना है मुझे तो बड़ा कुतूहल हो रहा है ?

मि० मोहन (रोना मुंह बना कर) हां मरो मि० वर्मा प्रतिभा से विवाह करना चाहते हैं।

मिसेज जोशी (मिस्टर वर्मा की दृष्टि को भरसक बचा कर) यदि मैं मि० वर्मा को अप्रतिभ नहीं कर रही हूँ तो ऐसा ही प्रस्ताव उन्होंने मेरे साथ भी किया था।

मिस्टर मोहन (जैसे स्वप्न में भी इसके लिये प्रस्तुत न हो) तुम्हारे साथ, कब, कहा ??

(मिस्टर वर्मा असम्बद्ध दूसरी ओर देखते है)

मिस्टर जोशी बहुत दिनों की बात है, ज्योती बीमार थे पर हम लोगोंने आशा का पल्ला न छोड़ा था पर मैं अजाने भावी वैधव्य के भय और आशंका से तिलमिला उठी थी। एक दिन साझं को मैं ज्योती को दवा पिला कर बैठी ही थीं कि मिस्टर वर्मा ने मुझ से यह प्रस्ताव किया कि मैं उनसे विवाह कर अपने आप को चिन्ता मुक्त कर सकती हूँ।

मिस्टर वर्मा देखिये आप ने इसे अत्यन्त भावुकता के साथ आनन्द

के सम्मुख रक्खा है। सत्य कुछ और ही है। बात यह है कि मैंने देखा आपका नारी रूप उस समय विलीन हो रहा था आप का अपना कोई पृथक व्यक्तित्व और अस्तित्व ही न था मैंने आपको सम्पूर्ण बनाने का प्रस्ताव किया मैंने क्या बुरा किया?

मिसेज जोशी (उत्साह से) पर मैं ज्योती को प्यार करती थी।

मिस्टर वर्मा पर उस समय एक चतुर और तत्पर नर्स उनके लिये आप से अधिक महत्व रखती थी।

मिसेज जोशी खैर अब आप प्रतिभा के विवाह करना चाहते हैं।

मिस्टर वर्मा (गम्भीरता से) देखिये मुझमें कुछ है नहीं मैं कुछ दिनों का मेहमान हूँ। मेरी जमीन जायदाद रुपया पैसा सब प्रतिभा का होगा, समाज में उसका एक विशिष्ठ स्थान होगा वह एक अनस्तित्व गृहणी या माता नहीं एक प्रतिष्ठित विधवा होगी, समाज से जीवन से उसका सीधा संसर्ग होगा क्योंकि समाज में उसका एक अतीत होगा, लोग उसके पति को जानने के लिये उसे जानेंगे...।

मिस्टर मोहन पर क्या तुम समझते हो प्रतिभा इसमें संतुष्ट रहेगी?

मिस्टर वर्मा क्या तुम समझते हो प्रतिभा एक माता या ग्रहिणी बनने में संतुष्ट रहेगी?

मिसेज जोशी — मातृत्व एक स्त्री का सर्वोत्तम और सर्वोत्कृष्ट रूप है।

मिस्टर वर्मा — मातृत्व एक पेशा है और आप या प्रतिभा की सी स्त्री के लिये एक निकृष्ट पेशा है। मैं नहीं चाहता प्रतिभा जीवन को समझने के लिये अपना शरीर और यौवन वेचें, मैं नहीं चाहता वह अपनी जीविका कमाने के लिये एक माता बने।

मिसेज जोशी — मैं तो वैधव्य को एक अपराध समझती हूँ।

मिस्टर वर्मा — क्योंकि आप स्वयं विधवा है और अपने स्वस्थ मन से वैधव्य लाभ नहीं किया है। क्षमा कीजियेगा क्या आप समझती है कि आपका जीवन इतना ही उपोदेय और सार्थक होता यदि आज मेरे मित्र मि० ज्योती वल्लभ जोशी जीवित होते और आप एक दर्जन बच्चों की माता, नानी और दादी होती......

(एक देवदूत के समान प्रतिभा का प्रवेश)

प्रतिभा — (इठला कर) चलिये चाय तो आप लोगों ने मिट्टी कर दी उठिये पापा आप तो सो रहे हैं।

मिस्टर मोहन — (जैसे वास्तव में स्वप्न से जगे हो) महेन्द्र का इन्तजार है महेन्द्र से तू ने कह दिया था सवेरे तू ने चाय के लिये नहीं कहा वह रूठ के चला गया।

प्रतिभा — महेन्द्र कब से मेरे कमरे में बैठा है पापा सब मेरी चीजें

तितर बितर कर दी।

मिसेज़ जोशी   हां महेन तो मुझ से पहले चल दिया था।

मिस्टर वर्मा   (मनोगत विचारो को सहसा दबा कर) प्रतिभा तुझे अपनी माता की याद है।

प्रतिभा   (किंचित झेंप कर) कुछ कुछ।

मिस्टर वर्मा   बिलकुल तेरी ही तरह थी पर मेरी ख़ातिर तुझ से अधिक करती थीं।

मिस्टर मोहन   (झप कर) अच्छा बातो से तो पेट भरेगा नही ।

(सब से आगे मिसेज़ जोशी और पीछे अन्य लोग भीतर चले जाते हैं केवल प्रतिभा रह जाती है जो गुलदाऊदी के एक बड़े से पूर्ण विकसित फूल में अपना मुह दबा देती है। भीतर के एक व्यस्त आवाज़ आता है : "प्रतिभा", प्रतिभा त्रस्त सी भीतर चली जाती है)

दूसरा दृश्य

खाने का कमरा पश्चमीय ढंग से सजा दीवार पर फूलो और फलों के रंगीन चित्र एक सुनहरा चित्र अवध के विलासी नवाब वाजिद अली शाह का। बीच में एक गोलमेज जिसके चारों ओर चार कुर्सिया

और एक स्टूल। कमरा छोटा जो बड़ी बड़ी अलमारियों से और भी छोटा हो गया है। एक कुर्सी पर बाइस वर्ष का स्वस्थ नवयुवक खाकी नेकर और रंगीन पुलोवर पहने का॰ को व्यस्त चला रहा है)

मिस्टर मोहन जाये तन्गास्त मर्दुमा बिसियार—अच्छा मैं बाद को खा लूंगा।

नवयुवक (त्रस्त सा उठ कर) मुझे तनिक भी भूख नहीं है।

प्रतिभा टाफी ! मेरा सारा टाफी का डिब्बा खत्म कर दिया है

मिसेज़ जोशी (हंस कर) क्यों महेन्द्र घर पर तो "टाफी कृत्रिम भोजन है"।

महेन्द्र किसकी बात का विश्वास करती हैं आप अभी, सवेरे से शाम तक सारी चट कर गई और मेरा नाम लगा दिया भला इतनी मैं कैसे खा पाता ।

प्रतिभा (बढ़ कर) और जेबें वे और जेबें जो भरी हैं।

मिस्टर मोहन अच्छा तुम दोनो बाद को खाना। जाओ खाना लगाने को कहो चलो महेन्द्र भूखे होगे तो नियत लगीगी।

प्रतिभा (पुलकित स्वर में) मैं कसम खाके कहती हूँ मैं भूखी हूँ पापा।

मिस्टर मोहन अच्छा ! अच्छा !

(दोनों बाहर चले आते हैं। एक कमरा दीवारें

सादे कागज से मढ़ी, कुछ सोफे अस्त व्यस्त पड़े हैं जमीन पर एक शीतलपाटी बिछी है जिस पर कुछ पुस्तकें और कागजात अस्त व्यस्त पड़े हैं। प्रतिभा एक सोफे पर बैठ जाती है महेन्द्र यह देख कर कि खाने के कमरे से दिखाई नहीं देता उसके चरणो के पास बैठना चाहता है)

प्रतिभा (उसे उठा कर धीरे से) उठो यही तो मुझे अच्छा नहीं लगता।

महेन्द्र क्या प्रतिमा तुमने मेरा हृदय तोड़ दिया।

प्रतिभा देखो महेन्द्र हृदय तो टूटने के लिये ही बने हैं। मानव जीवन की सब से बड़ी ट्रेजडी तो यही है कि हमारे हृदय नहीं टूटते पर तुम कितने नासमझ हो महेन्द्र।

महेन्द्र मेरी सोने की लंका राख हो गई। तुम उपदेश दे रही हो निर्दय।

प्रतिभा फिर वही लंका यदि जल न गई होती तो उसे कोई सोने की क्यो कहता.. .

महेन्द्र तुम साफ कह दो तुम मुझे प्रेम नहीं करतीं।

प्रतिभा हा यह हुई बात एक प्रेमी के समान पर यह मैं कैसे कह दूं।

महेन्द्र फिर तुम मुझ से विवाह क्यों नहीं करतीं।

प्रतिभा (विकल होकर) क्यों मुह फोड़ कर कहलवाते हो में तुम्हे प्रेम करती हूँ।

(प्रतिभा और महेन्द्र दोनो चुप रहते हैं)

प्रतिभा तनिक स्वस्थ मन से विचारों विवाह करने के पश्चात हम दोनो एक दूसरे को उसके निकृष्ट से निकृष्ट अवसर पर देखेंगे। हमारे बीच में जो विस्मय जो सरस कुतूहल है जो कल्पना है एक ही दो वर्ष में उड जायगी तुम तनिक तनिक सी बात में मुझ से खीजोगे क्योंकि हम में से कोई एक दूसरे के लिये न्याय न कर सकेगा

महेन्द्र तुम मुझे प्रेम ही नहीं करती।

प्रतिभा अच्छा मैंने महेन्द्र नाम के नखखट लड़के को न कभी प्रेम किया, न करती हूँ। और न करूंगी केवल टाफी चु राने के अपर,ध में पुलिस में न दूगी।

महेन्द्र (निश्वास लेकर) हंस लो प्रतिभा।

प्रतिभा (नेत्रो में एक विशेष चमक के साथ) देखो बिला विवाह किये हुए भी तो हम एक दूसरे के साथ रह सकते है।

महेन्द्र कैसे ?

प्रतिभा मैं तुम्हें अपना पोष्य पुत्र बना लूं।

महेन्द्र धत् (हंसने की चेष्टा करता है)

प्रतिभा अच्छा तुम मेरे भाई हुए। हुई न फैशनेबुल बात

(दुलरा कर) मेरा भय्या।

महेन्द्र — देखो प्रतिभा भाई वहन का नाता कहने में तो बड़ा सुन्दर लगता है पर इससे शिथिल नाता कोई संसार में होगा भी नहीं...।

प्रतिभा — लोलुप शायलाक तुम मेरे सब कुछ हो पति के अतिरिक्त, जाओ ब्लैंक चेक देती हूं।

महेन्द्र — पर प्रतिभा तुम विवाह क्या सचमुच मि० वर्मा से करोगी।

प्रतिभा — (आंखों में आभा भर कर) हां।

(महेन्द्र दूसरी ओर अन्यमनस्क देखता है और प्रतिभा की अंगुलियो से खेलता है। द्वार से मि० वर्मा का प्रवेश दोनों अचकचा के उठ खड़े होते हैं मि० वर्मा उनकी ओर वात्सल्य से देखते हैं)

(अक्टूबर १६३३)

"रोमांसः रोमांच"

(एक छोटा सा कमरा जो निर्जीव निश्चलता में चित्र लिखित सा प्रतीत होता है। बाईं ओर कार्निस पर लालटेन मन्द मलिन जल रही है जैसे वह कमरे की आत्मा हो जिसके बिलकुल सम्मुख खद्दर के हिम श्वेत कपड़ों में देवदूत के समान एक पुरुष बैठा है सामने उसके एक टेबुल है जिस पर कांच का एक खाली गिलास रक्खा है इधर उधर ३,४ कुर्सियां पड़ी हैं। कमरे के एक कोने में स्टोव जल रहा है जो कमरे में जीवन का एक मात्र लक्षण है)

पुरुष — (पीछे द्वार की ओर देख कर जैसे वह द्वार उसने अभी देखा है) क्या मैं स्टोव बुझा दूं ?
क्या आप अभी चाय पियेंगे ?

पुरुष — अभी नहीं बाबू...भाई...मिस्टर सिंह को आ जाने दीजिये।

(भीतर से बर्तनो के खड़खड़ की आवाज आती है)

पुरुष — (केवल नीरवता को भंग करने के लिये) यहा के तांगे वाले बड़े शरीर हैं।

(नीरवता और भी प्रगाढ़ हो जाती है)

स्त्री का स्वर देखिये क्या बजा है आप एक प्याला चाय ले लीजिये।

पुरुष (अपनी हाथ की घड़ी देख कर) सवा दस, पर देखिये पानी उबल रहा है।

(वह व्यस्त सा उठना चाहता है और कांच का गिलास झनझना कर फर्श पर चकनाचूर हो जाता है, कमरे का वातावरण सिहर उठता है। भीतर से स्त्री विस्मय भय और कातरता का एक विचित्र समिश्रण लेकर आती है और किंचित मुस्का कर अपने मैले आचल से कांच बटोरना प्रारम्भ करती है)

पुरुष (असंभवता है) मुझे खेद है।

स्त्री (कृत्तिमता से) क्यों?

पुरुष (चौंक कर) पर उधर देखो सारा पानी भाप बन कर उड़ा जा रहा है।

स्त्री (एक निश्वास लेकर) उड जाने दो ।

पुरुष सी० ई०...

स्त्री (चौंक कर) क्या हुआ ?

पुरुष (चपल मुस्कान से उसकी ओर देखता है । दूसरे ही क्षण द्वार की ओर देख कर अप्रतिम हो जाता है द्वार पर एक किंचित भद्दा और मोटा मनुष्य खड़ा

है। उसके नेत्रो में दृढ़ता और लम्बे प्रशस्त ललाट पर विजय का निःसन्देह आभास है। पुरुष उसे देख कर उठ खड़ा होता है और त्रस्त सा विमुग्ध सा उसकी ओर हाथ फैला कर बढ़ता है)

आगन्तुक (तीव्र भद्दे स्वर में) मुझे हांथ मिलाने की जल्दी नहीं है।

(स्त्री इस स्वर में सिहर उठती है पर शीघ्र ही कांच के टुकड़ो को एक कागज पर रख कर भीतर चली जाती है आगन्तुक आगे बढ़ कर एक कुर्सी पर बैठ जाता है और पुरुष भी उसके सामने बैठने का उपक्रम करता है)

पुरुष (अर्ध चाटुकारिता से) हम लोग आपकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे मिस्टर सिंह।

मिस्टर सिंह (केवल उनकी आर देखते है और फिर अन्यमनस्क बाहर की ओर देखने लगते है।)

पुरुष मै कल का चला अभी अभी यहां पहुँचा हूँ लखनऊ में गाड़ी मिस कर दी।

मिस्टर सिंह (माथे पर बल डाल कर) क्षमा कीजियेगा मै आप का नाम भूल गया।

पुरुष (लज्जारुण होकर) अमर, मुझे अमरनाथ कहते है।

मिस्टर सिंह — मिस्टर अमरनाथ आप आर्य समाजी हैं।

अमरनाथ — नहीं : क्यों ?

मिस्टर सिंह — कुछ नहीं मैंने आपको बिला देखे ही कुछ कल्पना कर ली थी।

अमर नाथ — बिला देखे मेरी आप की भेंट हो चुकी है आप भूल गये !

मिस्टर सिंह — नहीं मुझे याद है पर वह आप का पूर्णतयाः विभिन्न रूप था उस समय मैं आपको केवल अपनी पत्नी का प्रेमी था प्रशसंक ही जानता था पर बाद को मुझे मालूम हुआ आप उसका उद्धार भी करना चाहते हैं। मुझे स्वीकार करना पड़ेगा मैं आपका पत्र पढ़ कर सिहर उठा पर मेरा सन्तोष यही था कि मैंने उसे चोरी से पढ़ा।

(स्त्री द्वार तक आती है पर अन्तिम शब्द सुन कर लौट जाती है)

अमरनाथ — मैं........

मिस्टर सिंह — मैं जानना चाहता हूँ कि आप—(सहसा उठ कर) पर देखिये पानी उबल रहा है (भीतर की ओर एक कर्कशता से देख कर) चन्दा की मां यह पानी....

स्त्री — (सभीत आती है पर तुरन्त ही प्रौढ़ता से कहती है) मरे हुए लोगों के नाम से पुकारना संसार में तुम्हीं को रुचता है।

मिस्टर सिंह	क्षमा करो मुझ में पुरुष का शौर्य विलकुल नहीं है खैर पानी ओर रख दो मैं स्नान भी करना चाहता हूँ।

अमर नाथ	स्नान!!

मिस्टर सिंह	(अपना अवसर पाकर) स्नान पर मैं आप को विश्वास दिला सकता हूँ कि इसका सम्वन्ध आप के शुभ कार्य से कुछ भी नहीं है।

(अमरनाथ कुछ कहना चाहता है पर स्वांस भर कर रह जाता है, स्त्री की आकृति कुछ मलीन हो जाती है वह सवेग केटली उतारती है और अपना हाथ जला लेती है। अमरनाथ उसकी सहायतार्थ उठना चाहता है पर एक अज्ञात भय और आशंका की कल्पना कर वह बैठा रहता है)

मिस्टर सिंह	(लापरवाही से) जंम्वक अगर हो तो फौरन लगा लो बाद को......

स्त्री	(पीड़ा से सिहर कर) जंम्वक हो या न हो पर एक अतिथि के अपमान का तुम्हें कौन अधिकार है?

मिस्टर सिंह	अपमान मैंने किस का अपमान किया? मिस्टर अमर-नाथ क्या आप अपनी प्रेयसी के पति के अपमान को एक भद्दी और जनानी कायरता नहीं समझते हैं?

स्त्री	उफ़!

मिस्टर सिंह (कृत्रिम सहानुभूति से) क्या अंगुली अधिक जल गई है?

स्त्री (हताश हो कर) अधिक जल गई है। मेरा जीवन राख हो गया।

मिस्टर सिंह (सूनी हंसी हस कर) मिस्टर अमरनाथ मुझे संतोष है आप हमारी इन घरेलू लडाइयो में कविता का नाटकीय आभास अवश्य पावेंगे और मेरा तो पूरा विश्वास है कि दो वर्ष से अधिक पति पत्नी रहने के पश्चात यदि स्त्री पुरुष कभी भी नहीं लड़ते तो दोनो कायर हैं या दोनों एक दूसर को धोका देते हैं।

अमर नाथ मुझे इसका अनुभव......

मिस्टर सिंह अनुभव तो मनुष्य जीवन की हार है, संसार का कोई अप्रिय सत्य जब हमे पूर्णतयः परास्त कर देता है हम उसे अनुभव कहते हैं। आप युवक है आप के जीवन में धृष्टता होनी चाहिए कल्पना और गलती करने की अदृम्य क्षमता, अनुभवो को आप बृद्ध असम्भव लोगों के लिये छोड़ दीजिये जो आत्म तुष्टि के लिये पग पग पर बंधन बनाते हैं।

अमर नाथ मुझे खेद है मैं इसका एक शब्द भी नहीं समझता।

मिस्टर सिंह (शिथिलता से) मैं स्वयं नहीं समझता। एक हिन्दू

जीवन का यही सार है हम वस्तुओं को समझने से पहले ही उनका सदुपयोग करना चाहते है हमारे लिये उन्हें समझना एक अनधिकार चेष्टा, एक ऐयाशी है।

अमर नाथ (भावुक दृढ़ता से) मैं तो सीधी सरल भाषा में राई को राई और पर्वत को पर्वत कहता हूँ।

मिस्टर सिंह केवल इसलिये कि राई को राई के अतिरिक्त और कुछ कहने का न आप में साहस बल है और न कल्पना। पर्वत को पर्वत कहते हुए ही आप एक भारतीय और हिन्दू रह सकते हैं अन्यथा......

(स्त्री उठ कर उंगली मलती हुई एक कुर्सी के पीछे खड़ी हो जाती है दोनो उसकी ओर देखते है एक मलिन संकोच के साथ दूसरा अदम्य विश्वास से)

अमरनाथ आप को स्नान को देर हो रही है!

मिस्टर सिंह (औपन्यासिक वेग से) मैं जो कुछ भी हूँ, विवाहित जीवन के बाद मैंने केवल एक बात अनुभव की है कि मैं पुरुष हूँ और एक असुन्दर स्वार्थी पुरुष हूँ। मैं गर्व के साथ कह सकता हूँ कि मैंने अपने आप को कभी धोखा नहीं दिया और इसलिये शायद बहुत कम लोगों ने मेरे वास्तव रूप को देख पाया किन्तु मैं कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता कि मेरी पत्नी एक ऐसे पुरुष

को जो न जीवन को समझता है न स्त्री को हमारे जीवन में ले आयें। और फिर एक सुधारक के ढीले भद्दे वस्त्र पहना कर, एक उद्धारक का निर्जीव चेहरा लगा कर।

(स्त्री कुछ कहना चाहती है और इस प्रयत्न में हिंसक सी प्रतीत होती है अमर नाथ उत्तेजना में हाथ की उंगलियां वेग से चिटकाता है)

अमर नाथ — (कठिन साहस से) देखिये मिसेज़ सिंह सुखी नहीं है।

मिस्टर सिंह — सुख केवल एक लक्षण है हम उसके साथ ऐसा व्यवहार नहीं कर सकते जैसा थर्मामीटर के साथ और न उस पर इस प्रकार वाद विवाद ही कर सकते हैं। विवाहित जीवन में सुख केवल उस अहंकार का नाम है जो स्त्री को पुरुष पर या पुरुष को स्त्री पर विजय पाने में होता है।

अमर नाथ — (कुटिल हंसी हंस कर) जीवन की ठोस बातें इस प्रकार शब्दो की आंधी में काश उठ सकती होती।

मिस्टर सिंह — (करुणा से) लीजिये मै कुछ न बोलूंगा मैं आपकी इन ज़नानी भावनाओ का शांत सरोवर देखना चाहता हूं।

(थोड़ी देर गंभीर नीरवता रहती है जिसमें

सब एक दूसरे की ओर से उदासीन से रहते हैं। कुछ देर बाद नीरवता के गम्भीर स्वर के समान अमर नाथ बोलना प्रारम्भ करता है पर वह ऐसा ही प्रतीत होता है जैसे वह स्वयं अपने आप से बात कर रहा हो)

अमर नाथ — मैं अपनी तत्परता और सच्चाई तो कभी भी प्रमाणित कर सकता हूँ और पूर्ण विश्वास के साथ कहता हूँ कि मेरा आप लोगों के जीवन में आने का केवल एक मात्र सदुद्देश्य मिसेज़ सिंह को यथा शक्ति निरापद और सुखी बनाना है।

मिस्टर सिंह — (ज़रा मिश्रित उत्सुकता से) किस प्रकार ?

अमर नाथ — आप के अन्दर पुरुषोचित और मिसेज़ सिंह के अन्दर स्त्रियोचित भावनाओ को जाग्रत कर, मुझे विश्वास है आपने स्त्री को नहीं समझा।

मिस्टर सिंह — आपने उसे क्या समझा है ?

अमर नाथ — मैं स्त्री को शक्ति मानता हूँ वह जीवन की पूर्णक है, उस के बिना जीवन अंधे का सहारा है।

मिस्टर सिंह — (दांत पीस कर) यहां मेरा आपका मतभेद है, कठिन मतभेद है, मैं स्त्री को पुरुष के लिये एक संकट समझता हूँ और मेरे निकट उस संकट से बचने का केवल एक उपाय है उसे गर्भवती कर देना है किन्तु . . .

यह मतभेद नहीं है यह जीवन की विषमता है। खैर परिभाषाओ को छोड़िये वह तो एक बचाव है केवल एक प्रवंचना।

(स्त्री और अमर नाथ आवेश से कांप उठते हैं पर मंत्र मुग्ध के समान मिस्टर सिंह के तमतमाये मुख की ओर देखते हैं)

मिस्टर सिंह (तनिक शांत होकर) मैं आप लोगों को एक रास्ता बताता हूँ हिन्दु समाज में तलाक़ का स्थान नहीं है इसलिये नहीं कि हिन्दू समाज ने स्त्रियों पर पुरुषों को अनुचित स्वत्व दिया है वरन् इसलिये कि विवाहित जीवन में स्त्री और पुरुष दोनों ने केवल एक भावना से काम लिया है लाल रक्त वर्ण ईर्ष्या, पर धर्म परिवर्तन के बाद शायद यह बंधन नहीं रहते यदि मिसेज़ सिंह सहमत हों तो मैं उनको बंधन मुक्त करने के लिये आज, अभी चर्च या मसजिद में जा सकता हूँ और उसके पश्चात आप दोनों विवाह कर सकते हैं।

अमर नाथ (जैसे इसके लिये प्रस्तुत हो) पर मैं मिसेज़ सिंह को अपनी बहन तुल्य मानता हूँ।

मिस्टर सिंह (आवेश और क्रोध से खड़े हो कर) मैं यह नहीं सहन कर सकता कि तुम मेरा इस प्रकार अपमान करो तुम

इस प्रकार मिसेज् सिंह को धोका दे सकते हो और अपने आप को पर भावुकता के इस भद्दे अस्त्र को मेरे ऊपर मत चलाओ।

स्त्री — हाय यह क्या हो रहा है ??

मिस्टर सिंह — (किंचित शांत हो कर) कुछ नहीं मैं जानता हूँ कि एक स्त्री को दूसरे पुरुष से चुराने में एक पुरुषोचित विजय एक उल्लास है किन्तु...मैं नहीं समझ सकता...

(आवेश में नसे तन जाती है)

स्त्री — (शून्य स्वर में) अच्छा नहान चलो साढे बारह बज रहे हैं। भोजन कब करोगे (एकाएक स्वर में स्नेह भर कर) उठो।

अमर नाथ — आप शान्त हो जाइये।

मिस्टर सिंह — (बलात् मुस्का कर) मुझे खेद है मुझ में किंचित नाटकीय उत्तेजना भी है पर मेरे अन्तिम शब्द हैं कि आप मिसेज् सिंह को अपनी पत्नी के रूप में ले जा सकते हैं बहन के रूप में नहीं।

(उठ कर अन्दर चला जाता है थोड़ी देर कठिन नीरवता रहती है)

स्त्री — (अपने समस्त साहस से) आप ने अपने रहने का प्रबन्ध कर लिया है ?

अमरनाथ (जैसे स्वप्न से जागा हो) हां, नहीं पर मैं रात्रि की गाड़ी से चला जाऊंगा (उठता है और कोने की अल-मारी के ऊपर से अपना किर्मिच का वैग उठाता है)

स्त्री (किंचित स्नेह से) और भोजन ?

अमर नाथ (द्वार के पास पहुँच कर कठिनता से) भोजन मैंने कर लिया स्टेशन कपूर के यहां

(स्त्री कुछ देर अप्रतिभ खड़ी रहती है पश्चात एक निश्वास ले कर द्वार के बाहर हृदयहीन अन्धकार में कुछ खोजती है। कमरे में प्रगाढ़ क़ब्र की सी नीरवता और निश्चलता है केवल एक प्रखर और उत्तेजित सत्य के समान स्टोव सन सन भायं भायं जल रहा है)

(मार्च १९३५)

"लाटरी"

(सुरुचिपूर्ण एक छोटे से दोमंजिले बंगले का दूसरी मंजिल का एक कमरा। द्वार पर काले साटिन के पर्दे पडे हैं केवल उत्तर ओर की खिड़की खुली है जिससे पूर्णिमा का एक कंकाल के समान चन्द्रमा अपने प्रेत नेत्रों से झांक रहा है। कमरा सुरुचि से सजा है, दीवार पर सम्यरुचिके चित्र है फरनीचर सादा पर सुन्दर और क़रीने से रक्खा है। एक ओर टेबुल पर हरा प्रकाश हो रहा जिसमें एक सुन्दर बालक और बालिका खड़े तस्वीरो की किताब देख रहे हैं)

बालक — यह किताब बाबू जी मेरे लिये लाये है।

बालिका — ऐसे तो। बाबू जी कल फिर चले जायंगे कुछ मालूम है और फिर मेरे लिये एक छोटा सा हवाई जहाज़ ला देंगे।

बालक — हवाई जहाज़ कितना बड़ा होता है कुछ जानती हो?

बालिका — बाबू जी ने हवाई जहाज़ देखा है।

बालक — देखा है जनाब उसमें डाकू रहते है डाकू।

बालिका — जी हां!

बालिका अच्छा हम से न बोलिये।

(बालक उसके पैरों को कीलदार जूते से दबा देता है बालिका कातर हो कर रो पड़ती है और भीतर की ओर जाती है)

बालक मैंने न देखिए मारा है न कुछ मम्मी, मुझे मारती है तब कुछ नहीं।

(मेज़ पर रक्खे एक छोटी सी सीप की सरस्वती की मूर्ति को उलट पलट कर देखता है, बाहर एक करुण और मधुर स्वर सुन पाता है दूसरे ही क्षण एक रमणी प्रवेश करती है उसके मुख पर ऊषा का पीला और करुण सौन्दर्य है नेत्र नीले और गहरे, केश ग्रीक किसी देवी के समान है)

"रमणी" क्यो रे विनोद तू फिर मारपीट करता है?

(बालक उसकी ओर कातरता से और दूसरे ही क्षण शिथिलभाव से पीछे खड़ी हुई बालिका को देखता है)

"रमणी" अच्छा रानी जाओ अपने खरगोशों से खेलो देखो उस कत्थई बच्चे की टांग मत दुखाना और विनोद अगर तुमने फिर मारा तो मैं तुम्हें पीपे में बन्द करूँगी, जाओ रानी मुन्नी खेलो। विनोद किताब रख दो।

रानी — ममी बाबू जी कहां गये हैं ?

रमणी — (निश्वास सा लेकर) आते होंगे जाओ खेलो।

(बालक अनमने बाहर की ओर जाते हैं ऐसे जैसे उन्हें आशा हो कि उनकी माता उन्हें फिर बुला लेगी किन्तु माता उनके बाहर जाते ही आहत एक सोफे पर गिर पड़ती है और नर्म तकियों में अपना मुंह वेग से दबा देती है, कुछ काल पश्चात बाहर किसी के पदचाप सुन पड़ते हैं स्त्री वेग से अपने अश्रु पोंछ कर खिड़की के पास खड़ी हो जाती है । एक पुरुष का प्रवेश, खद्दर का ढीला पैजामा कुरता और चद्दियें, अपनी आयु से १० वर्ष छोटा अर्थात् उसके नेत्रों से और चेहरे पर बीस वर्ष के युवक की प्रचुर ताज़गी है)

पुरुष — (कुछ क्षण एक चित्र को कृत्तिमता से देख कर) माया।

माया — (भर्राये हुए कण्ठ स्वर में) क्या !

पुरुष — यह क्या है माया यह तो कायरता है।

(माया अपना वक्ष दीवार से अड़ा देती है : वह अपने को आहत करना चाहती है)

पुरुष — याद है तुम मुझे कितना खिजाती थीं इस शिथिल भावुकता के लिये । इधर देखो माया मै पागल हो जाऊंगा

माया — काश मैं भी पागल हो सकती।

पुरुष (किंचित आवेश में) तुम पागल हो।

माया (वेग से घूम कर) सचमुच वह अभागी स्त्री पागल नहीं तो क्या है जिसके लिये एक पुरुष विदेश में अपरि-चितों में वर्षों रंगविरंगे स्वप्न देखता है और जब गर्म धड़कता हुआ हृदय लेकर आता है तो देखता है वह किसी दूसरे पुरुष के प्रेम में पागल है। अभागी स्त्री।

पुरुष माया मैं बड़ा दुर्बल हूँ।

माया और मैं दुर्बलता का ढोंग भी नहीं कर सकती मेरा बल मेरे लिये अभिशाप हो गया (कांपती सी प्रतीत होती है)

(एक शीतल और निर्दय नीरवता में दोनो खो जाते है । नौकर का प्रवेश · लम्बे कालर की कमीज बालो को श्रम से सवारे, चौड़ी किनारी की धोती। आते ही वह पुरुष को देख कर ठिठक जाता है और बाहर जाना चाहता है)

माया साहब का बिस्तरा कहां लगेगा ?

नौकर सरकार बिस्तरे को मना कर गये है (रुक कर और पुरुष की ओर एक भेद पूर्ण दृष्टि से देख कर) सरकार कह गये हैं कि उनका सामान भी न खुलें (थोड़ी देर

पैर के नाखून से धरती खोद कर जाना चाहता है।

नौकर — (द्वार के पास पहुँच कर) खाना लगाऊं, हजूर बाबा लोगों को खिला दिया।

माया — साहब को आ जाने दो।

नौकर — साहब तो मना कर गये हैं।

माया — (विचलित) तुम लोग खा लो यहां कोई नहीं खायेगा

(नौकर चला जाता है)

पुरुष — (एक निश्वास लेकर) यह क्या हो रहा है ?

माया — जो कुछ तुमने किया।

पुरुष — मैंने ??

माया — हां तुमने मुझे क्यों जानने दिया कि तुम मुझे प्रेम करते हो मेरी आत्मा में पैठ कर तुमने उस हिंसक बाघिनी को क्यों जगा दिया। मेरे जीवन में क्यों चिनगारियां भर दीं।

पुरुष — (वेग से) पर अभी देर नहीं है।

माया — कैसी देर ?

पुरुष — माया मेरे हृदय में तुम्हारे प्रेम का बल है. संसार का कोई भी कार्य मेरे लिये कठिन नहीं है. मैं तुम्हारे स्वप्न लेकर संसार के किसी कोने में चला जाऊंगा और तुम्हारे जीवन में एक सरस पर अप्रिय स्वप्न केवल एक

स्वप्न छोड़ जाऊंगा । और एक स्त्री के लिये भूल जाने से अधिक सरल और क्या है ?

माया — और मैं एक पुरुष के गले में निर्जीव लता के समान लिपटी रहूँ जिसे मैं प्रेम नहीं करतीं उसके लिये बच्चे उत्पन्न करूँ उसे प्रेम न करूँ समझूं नहीं पर उसके जीवन में ईर्ष्या की आग लगा दूं और सदैव अपने हृदय में एक दूसरे मनुष्य का दाहक प्रेम लिये रहूँ ?

पुरुष — (कातरता से) फिर क्या हो सकता है ?

माया — कुछ नहीं मृत्यु। हम में से एक को या दोनों को मरना पड़ेगा।

पुरुष — समाज ....

माया — समाजा का तिल ताड़ क्यों बनाते हो। समाज तो जीवन के अंधे पथ पर लाल प्रकाश है, कबाब की हड्डी है जो हमारे गले में अड़ कर हमें उन परिस्थतियों में खींच लाती है जिनसे बाहर होना जीवन को चुनौती देना है। प्रत्येक मनुष्य समाज से वैमनस्य नहीं कर सकता इसी तरह की प्रत्येक मनुष्य जीवन से आंख नही मिला सकता। जो ऐसा कर सकते है उन्हे हम महापुरुष कहते हैं। मैं समाज को कभी नही कोसूंगी।

पुरुष — मैं कहता हूँ.......

माया — तुम कुछ मत कहो अपने आप को उस स्त्री के सामने जिसे तुम प्रेम करते हो दीन न बनाओ।

पुरुष — तुम आज कैसे बातें कर रही हो ?

माया — तुम चुबनों से गर्म, अश्रुओं से सजे हुए असत्य चाहते होगे।

पुरुष — (किंचित क्रोध से) तुम्हें क्या हो गया है ?

(बाहर किसी का स्वर सुनाई देता है दोनों एकाग्र हो कर उसे सुनना चाहते है पर जब वह स्वर केवल एक आभास मात्र रह जाता है दोनों एक दूसरे की ओर देख कर एक दूसरे से कुछ सुनने की आशा करते है कि सहसा एक पुरुष खाकी नेकर और कमीज़ पहने शिथिल गति से प्रवेश करता है। उसके नेत्र दुरूह और श्रमित हैं और उसके चारों ओर एक विचित्र पर आकर्षक शीतलता है)

आगन्तुक — क्षमा करना पर मैं अभी जा रहा हूँ ।

(स्त्री केवल कातरता से उस की ओर देखती है पर वह कातरता अपराधी की नहीं है)

पुरुष — कहां जा रहे है आप ?

आगन्तुक — मुझे खेद है न मैं कुछ अपनी कह सका और न आप लोगों ही की कुछ सुन सका। बात यह है कि इसका

निश्चय अभी आध घंटे ही पहले किया है। ब्रिटिश गाइना में मुझे एक सोसायटी का मंत्री पद मिल रहा है मेरे जीवन का अवसर तो नहीं है पर है (माया की ओर देख कर) बच्चे कहां है अगर सोये न हों तो बुला लो।

माया (कुछ कहना चाहती है पर खिड़की के बाहर देखने लगती है दोनों पुरुष यह कल्पना कर उसकी ओर देखते हैं कि वह रो रही है)

पुरुष मैं तो अप्रतिभ हो गया हूँ किशोर भाई।

किशोर हां इसमें कुछ नाटकीय आभास तो अवश्य आ गया है पर तुम मुझे समझोगे और क्षमा करोगे।

पुरुष मैं तो एक निर्लज्ज कायर हूँ कुछ भी खोल कर नहीं कह सकता.......

(माया क्रोध में घूम कर हिंसक पर अत्यन्त करुण क्रोध से चिल्ला कर कहती है)

माया क्या तुम दोनों पुरुषों ने मुझे मिटा देने का निश्चय कर लिया है?

किशोर तुम कितनी औपन्यासिक हो गई हों—खैर मैं केवल बच्चों को देखने आया था।

माया बच्चे वह न तुम्हारे है न मेरे वह एक प्रवञ्चना के क्रूर

हास्य है जिसके हम दोनों शिकार हुए। वह भाग्य का एक कुटिल परिहास था रहने दो, तुम जा रहे हो जाओ मैं तुम्हे बधाई देती हूँ जाओ (घूम कर फिर बाहर देखने लगती है)

(मि० किशोर कुछ क्षण रुक कर सवेग बाहर की ओर चल देते हैं पुरुष उसे रोकना चाहता है पर मंत्र मुग्ध के समान खड़ा रहता है)

माया (घूम कर) देखो नाटक का यह दृश्य पूरा करो इस मनुष्य को रोको आज रात भर के लिये रोको जो एक निर्लज्ज वेवफा स्त्री के लिये अपना हृदय और घर तोड़ कर जा रहा है।

(पुरुष निर्वाक खड़ा रहता है पर कुछ सोच कर चल देता है माया विकल हो कर एक सोफे पर बैठ जाती है। कुछ देर बाद मिस्टर किशोर का किंचित उत्तेजित रूप में प्रवेश)

किशोर माया क्यो अपने साथ इस प्रकार खेल रही हो।

माया (अवरुद्ध कण्ठ से) मेरे साथ न्याय करो।

किशोर (भावुक वेग से) माया पगली इससे अधिक मैं क्या कर सकता हूँ।

माया इस प्रकार जाकर? सोचो इन बच्चो को क्या होगा?

किशोर	बच्चों के लिये अभी तुम क्या कह रही थीं ? पर आज यदि मैं मर जाऊं, किसी अपराध में काले पानी भेज दिया जाऊं उन परिस्थितियों में जो बच्चों का होता वही अब भी होगा ?

माया	निष्ठुर !

किशोर	फिर मैं क्या कर सकता हूं। मेरे पास एक पिस्तौल है प्रद्युम्न के लिये एक और पिस्तौल का बन्दोवस्त कर दो। मैं तुम्हे विश्वास दिलाता हूं कि मैं अच्छा निशानेबाज़ नहीं हूं और पहला फायर मैं उसी को करने दूंगा पर यह विचार ही मुझे तुच्छ और हास्या-स्पद मालूम होता है यह केवल एक स्टेज पर ही ही हो सकता है । माया मैंने भली भांति सोच विचार लिया है मुझे जाने दो और मुझे वच्चों को अंतिम बार प्यार कर लेने दो ।

माया	(दृढंता से मुट्ठी बांध कर) तुम पिस्तौल से क्या मुझे नहीं मार सकते।

किशोर	(सुनी हंसी हंस कर) आज से सौ वर्ष पूर्व किसी पिछले जन्म में शायद कर सकता पर मुझे विश्वास नहीं।

माया	क्या तुममें तनिक भी ईर्ष्या नहीं है क्या तुम मुझे रत्ती

भर भी प्रेम नहीं करते। क्या तुमने मानव.स्वभाव पर विजय पा ली है।

किशोर (चुप रहता ह)

माया बोलो समय कम है मैं इस संघर्ष को आज रात्रि में समाप्त कर दूंगी ।

किशोर (दृढंता से सिर उठा कर) अन्तिम बार तुम से असत्य न कहूँगा । मैं समझ गया हूँ कि मुझे ईर्ष्या की अग्नि में दहते देख कर दी तुम्हे सुख होगा पर तुम भी सुखी न रह सकोगी।

माया क्यों ?

किशोर कोई भी मनुष्य अपने प्रेमपात्र के साथ सुखी नहीं रह सकता। माया यह मेरा प्रतिघात है। तुम्हें उस बालक के लिये पग पग पर त्याग और बलिदान करना पड़ेगा और सुख, सुख नाम है विजय का।

माया (हताश हो कर सोफे पर गिर पड़ती है)

किशोर तुम क्यो इतना उद्विग्न हो तुम समझती हो तुमने मेरा जीवन मिटा दिया यह सत्य है कि उसमें स्त्री का कोई स्थान न होगा........

माया मेरे साथ न्याय करो मैं बड़ी निर्बल हूँ तुमने मेरे सारे शब्द, सारा बल ले लिया।

किशोर — मैं न्याय नहीं कर सकता न्याय तीव्र प्रतिहिंसा का सुन्दर नाम है मैं ऐसी भद्दी सार्वजनिक बातें नहीं कर सकता। बच्चो को प्यार से रखना उनका आर्थिक मूल्य ही समझ कर।

माया — (अत्यधिक उत्तेजना से) प्रद्युम्न !

(पास वाले कमरे में कुछ संचालन होता है और कुछ देर बाद वही पुरुष आता है)

प्रद्युम्न — क्या है ?

माया — कुछ नहीं यहां एक छोटा सा ड्रामा होगा। मैं किसी देश की राजकुमारी हूँ वैरियों के हाथ पड़ गई हूँ और मेरे लिये दो पुरुष झगड़ रहे हैं और उसका निर्णय तलवार या पिस्तौल से करना चाहते हैं। आओ उस दराज से एक पिस्तौल निकालो।

प्रद्युम्न — (तेज से) मैं इस खूनी लाटरी में विश्वास नहीं करता माया मेरा सामान तैयार है मैं किशोर भाई की पोस्ट पर जा रहा हूँ जरूरी कागजात बाद को भेज दीजिये गा किशोर भाई। (स्वर कांप रहा है)

(दोनो एक दूसरे की ओर शून्यता से देखते हैं प्रद्युम्न वेग से कमरे के बाहर हो जाता है किशोर उस

को रोकने के लिये बढता है पर माया उसे रोक लेती है)

माया (एक अमानुषिक अट्टहास कर के) स्त्री का वास्तविक जीवन जभी प्रारम्भ होता है जब एक पुरुष अपने आप को उसके लिये मिटा चुकता है वह मनुष्य चाहे उसका पति हो या प्रेमी (किशोर कटे हुए वृक्ष के समान एक सोफे पर बैठ जाता है)

(मार्च १९३५)

"उपसंहार"

स्त्री अपने रुचित पुरुषों को ही धोका देती है, यह उसकी सहज प्रकृति है कि अपने प्रिय पुरुष को वह अपने एक अंश का ही स्वामी बनाती है।

स्त्री अपने पति या प्रेमी को ईर्ष्यालु नहीं करना चाहती पर अन्य पुरुष को आत्म समर्पण करने के पश्चात वह उन्हें ईर्ष्या की अग्नि में दहते देख कर ही एकान्त सुख का अनुभव करती है।

अपनी पत्नी के सतीत्व पर सन्देह करो।

वह तुम्हे अवश्य धोका देगी।

उस पर विश्वास करो।

वह तुम पर सन्देह करेगी।

स्त्री के प्रेम के चार वर्ष:—

(पहला) प्राणाधार।

(दूसरा) प्यारे।

(तीसरा) ओह तुम हो।

(चौथा) संसार का और कोई काम तुम्हें नहीं है।

स्त्री एक विशेष पुरुष के लिये अपनी सम्मति अपने प्रति किये गये व्यवहार से ही बनाती है। उसका तर्क इस प्रकार होता है:

यह पुरुष बहुत भद्र हैं तुम कहते हो वह हत्यारा हैं उसने मेरी हत्या तो कभी की ही नहीं।

प्रत्येक स्त्री कहती है कि उसने कभी किसी को प्रेम नहीं किया पर अमुक पुरुष उसको अत्यन्त चाहता था। और वह यहां तक सम्पूर्ण हैं कि अपने ही असत्य पर विश्वास भी करती है।

स्त्री तुम्हे घृणा करेगी यदि तुम उसकी प्रकृति के समझने का दावा करते हो।

उस स्त्री से साव धान रहो जो तुम्हें कभी प्रेम करती थी और अब दूसरे पुरुष की प्रेयसी या पत्नी हैं क्योंकि उसका पुराना प्रेम कभी भी लौट सकता है और उससे बड़ी प्रवंचना संसार में नहीं है।

नारी पुरुष से कहीं क्रूर है और इसलिये पुरुष से कहीं अधिक सहनशील होने का दावा कर सकती है।

एक स्त्री दूसरे पुरुषों के पापों को सरस कुतूहल से देखती पर उन्हीं अपराधो के भ्रम मात्र पर वह अपने पति को तलाक़ देने पर प्रस्तुत हो जाती है।

जब एक पुरुष एक स्त्री से प्रेम करता है तो वह अपने समस्त पूर्व प्रेमियों को अपने ध्यान में रखती है यदि उसमें और किसी भी भूतपूर्व प्रेमी में कुछ भी समानता है तब उसकी सफलता की बहुत कम आशा है।

स्त्री एक पहेली है और उस पुरुष को घृणा करती है जो वह पहेली बूझ सकता है।

किसी भी स्त्री का तुम्हारा चुंबन अस्वीकार देना ऐसा है जैसा तुम्हारे बैंक का तुम्हारा चेक अस्वीकार कर देना।

मैंने अनेकों 'अच्छी' स्त्रियो को बुरी स्त्रियों के साथ समानता का व्यवहार करते देखा है, बुरी स्त्रियों को बुरी होने में आखिर क्या टोटा हुआ?

"पुरुष स्त्री को समझ ही नहीं सकता" कहना निरर्थक है क्योंकि उसे समझ कर कोई भी पुरुष स्त्री के विषय में मुंह नहीं खोलता।

एक स्त्री तुम्हारा चुंबन लेगी और तुरन्त ही यह भी कहेगी कि उसका पति कितना सुन्दर व्यक्ति है।

स्त्री एक पुरुष के गुणों को का आदर कर सकती है पर वह उसके अवगुणों को ही आत्मसमर्पण करती है।

स्त्री अपने प्रेमी को अंजान पुरुषों के सम्मुख हीन बनाने का प्रयत्न क्यों करती है?

तीन दिन के वासना प्रवाह में स्त्री बह जाती है और तीन वर्ष के एकांगी प्रेम पर वह एकान्त में हंसती है।

वृद्धा स्त्री शत प्रतिशत अपने यौवन काल में सच्चरित्र रह चुकी है उनके लिये कुकल्पनायें करना कापुरुषता है।

एक बाजी ताश खेल कर या एक कहानी सुना कर जिसका नायक वह स्वयं है पुरुष जितना आमोद कर सकता है स्त्री के लिये उतना आमोद का मूल्य एक पुरुष की समस्त जीवन का सुख है।

एक स्त्री से कहो उसके पैर तुम्हारे पैरों से बहुत छोटे हैं वह प्रसन्न हो जायगी पर यदि इससे भी पूर्ण सत्य यह कह दो कि उसका मष्तिष्क तुम्हारे मष्तिष्क से छोटा है वह प्रलय कर देगी।

एक स्त्री के लिये उसके प्रिय पुरुष को "कोई" होना चाहिये वह सरस हो न हों या वह सरस ही हो चाहे समाज में उसका कुछ स्थान हो या न हों।

एक महान पुरुष यदि एक स्त्री के पीछे भागता है तो इसमें स्त्री के लिये गर्व की कौन सी बात है वह उस स्त्री से वही चाहता है जो उसे सहस्रों अन्य स्त्रियां दे सकती हैं।

जब एक पत्नी की वासना अपने पति के लिये धीमी पड़ जाती है वह एक वृद्ध और शिथिल वाघिनी के समान हो जाती है।

कुछ स्त्रियो के लिये विवाह एक विश्राम, एक परिवर्तन है जब यदि वह चाहे तो प्रेमियों के चुंबनों और कर्म श्वासों से अवकाश ग्रहण कर सकती हैं।

स्त्री के ज्ञान कोष में आमोद प्रमोद के केवल एक अर्थ है : वह करना जो उसे नहीं करना चाहिये।

स्त्रियां सहस्रो हवाई महल बना सकती है यदि उनके पति उनमें नित्य प्रीति भोज दिया करें।

स्त्री के लिये प्रेम का अर्थ है कि कोई उन्हे प्रेम करे।

पुरुष अनेकों उपायों से एक स्त्री के लिये अपना प्रेम प्रमाणित कर सकता है पर स्त्री के पास केवल एक उपाय है।

पुरुष स्त्री के लिये एक आवाहन है, निमंत्रण है पर स्त्री पुरुष के लिये चैलेंज है चुनौती है।

संसार में 'प्रेम' कवियो और काहिलो के मतिष्क में ही मिल सकता है।

सुन्दर वेश्या समाज के लिये उतनी ही आवश्यक है जितना एक चतुर डाक्टर ।

विवाहिता स्त्री वेश्या को घृड़ा से देखती है इसी प्रकार जैसे एक होम्यो-पैथिक डाक्टर एक हकीम को।

विवाह का भयानक से भयानक विरोधी इसे स्वीकार करेगा कि यह संयमित व्यभिचार है।

मातृत्व एक पेशा गुण है, पर पुरुष की सन्तानोत्पादक शक्ति एक व्यसन है, दुर्बलता है।

पुरुष और स्त्री की आत्मायें दो विभिन्न पदार्थों की बनी है।

एक पुरुष के लिये किसी स्त्री को क्षमा करना भावुकता है, एक स्त्री के लिये आसुओ से उसका सब से अच्छा सूट बिगाड़ देन के बाद यह कहना बहुत सहज है "प्यारे मै पश्चात्ताप से मरी जा रही हूँ" हालाकि जितनी हानि वह करना चाहती थी कर चुकी।

स्त्री फैशन की गुलाम है जिस समाज में पति को प्रेम करना फैशन है वहा वह सती भी हा सकती है।

अपनी आयु से कम जचना पुरुष के लिये अपराध है स्त्री के लिये वरदान।

स्त्री कितनी पारदर्शी (Transparent) होती है, उनकी साडियां देखिये।

स्त्री का जीवन शाट पाट और आभूषणो में है, यदि उसकी साड़ी आप उतार सकते है तो उसके पास और कुछ नहीं है।

धनाढ्य परिवारो की अधिकाश कुमारिया विवाह न करे यदि सतान निरोध की कोई घुलने वाली (Soluble) औषधि उन्हें मिल जाय और व्हाइटवे के यहां बच्चे भी बिकते हो।

यदि तुम एक विवाहित स्त्री को प्रेम न करो वह अपने मन में कहेगी यह पुरुष ही नहीं है। यदि करो तो वह अपने पति से कहेगी यह आदमी जेन्टिलमैन नहीं है।

स्त्री उन पुरुषों के साथ फ्लर्ट करती है जो उससे विवाह नहीं करते और उस पुरुष के साथ विवाह करती है जो उसके साथ फ्लर्ट नहीं करता।

एक विवाहिता सुसंस्कृत रमणी अपने पति के साथ दाल मंडी और चावड़ी बाजार में से गुज़र सकती है आपि यदि देख सकते है तो उसके नेत्रों में विजयोल्लास भी देख लीजिये। क्यों?

यदि वह एक बार किसी पुरुष को प्रेम करे तो पतित स्त्री से अच्छी कोई स्त्री नहीं है।

स्त्री की वासना पर विजय पा लेना सुगम है, तुम उसका प्रेम पाने के लिये अपनी जान खपा सकते हो पर उसके बाद जो कुछ भी तुम स्त्री से पाते हो उसकी वासना ही है।

विवाह करते समय स्त्री पुरुष की अच्छाई या बुराई का विश्लेषण नहीं करती पर विवाह करने के तुरत पश्चात ही वह उसे 'अच्छा' देखना चाहती है।

स्त्री अपने हृदय से यह भावना कभी नहीं निकाल सकती कि एक पुरुष को प्रेम कर वह उसे आभारी बना रही है। ट्रेजेडी तो यहीं है।

संसार एक रंग भूमि है जिसमें स्त्री अनेको पार्ट एक साथ खेलती हैं।

एक स्त्री से विवाह करने के लिये एक पुरुष को आकर्षक होना चाहिये, उसके साथ सदैव वाञ्छित सम्बन्ध रखने के लिये उसे संसार के समस्त पुरुषों से जिनसे उसकी पत्नी मिलती है आकर्षक होना चाहिये। कहिये पर्दा-प्रथा के लिये कौन अधिक उत्तरदाई है?

एक स्त्री एक कुमार के साथ अपना व्यभिचार स्वीकार कर लेगी पर विवाहित पुरुष को वह सदैव बचायेगी; उसकी पत्नी के लिये। यह नैतिक ट्रेड यूनियनिस्म तनिक देखिये।

ऐयाशी के ससार में।

स्त्री देती है।

पुरुष पाता है।

विवाह के संसार में।

पुरुष यदि कुछ भी झपट कर छीन ले तो वह उसे बहुत दिनों तक अपने पास रख नहीं सकता।

आधुनिक विवाह स्त्री के वृद्धावस्था के लिय जब उसका पुरुष के लिय कोई अर्थ नहीं रह जाता है, बीमा है और वह भी निःशुल्क (Free)

एक स्त्री से कहो वह पुरुष जो नीला सूट पहने जा रहा है बड़ा रंगीला है बस लेडी किलर ही समझो। वह स्त्री घृणा से अपने अधर काटेगी चाहे उनमें कितना ही सुन्दर लिपस्टिक क्यों न लगा हो पर उस रात को वह उसे नीले सूट वाले पुरुष के अतिरिक्त और किसी पुरुष को अपने ध्यान में न लायेगी।

स्त्री आकाश कुसुम तोड़ ला सकती है पर यह वही कर सकती "मैं अपराधी हूँ"।

जब एक स्त्री झूठ बोलती है तो उससे सत्य बात पाना इतना ही असंभव है जितना एक उबले हुए अंडे से बच्चा क्योंकि यदि तुम उसका (उसके असत्य का) विश्वास नहीं करते तुम उसे प्रेम नहीं करते।

तुम एक स्त्री को उसके प्रेम वाक्यों की याद दिलाओगे जो प्रेम की प्रथम उफान में उसने तुम से कहे थे वह बिगड़ जायगी। क्यों ?

स्त्री पुरुष की आश्रिता है इसके यह अर्थ है कि स्त्री के लिये पुरुष को आश्रय देना अनिवार्य है।

विवाह के विषय में इससे सरल सारगर्भित सत्य और और कोई नहीं हो सकता कि "विवाह एक बंधन है।"